॥ ओ३म् ॥

RNI/MPHIN/2009-28723
डाक पंजीयन संख्या MP/IDC/1533/2017-2019

वैदिक राष्ट्र

वैदिक राष्ट्र (मासिक पत्रिका)
ऋग्वेद
यजुर्वेद
सामवेद
अथर्ववेद
वयं राष्ट्रे जागृयाम:

वेद, वैदिक साहित्य, आध्यात्मिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय अनुसंधानात्मक मासिक पत्रिका

वर्ष–12, अंक–02 | इन्दौर, जून 2020 | मूल्य 30 रुपए
प्रकाशन दिनांक – 28 जून 2020 | डाक प्रेषण दिनांक – 30 जून 2020

पृथिव्या अकरं नम: अथर्व. 12.01.26

विश्व पर्यावरण दिवस की सभी पाठकों को हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएँ...

डॉ. आचार्य भानुप्रताप वेदालंकार
संपादक– वैदिक राष्ट्र मासिक पत्रिक

छत्रपति शिवाजी
जन्म- 19.02.1630, बलिदान- 03.04.1680

रानी लक्ष्मीबाई
जन्म- 19.11.1828, बलिदान- 18.06.1858

महाराजा छत्रसाल
जन्म- 04.05.1649, बलिदान- 20.12.1731

महापुरुषों के स्मृति दिवस पर शत् शत् नमन्

रानी दुर्गावती
जन्म- 05.10.1524, बलिदान- 24.06.1564

उधम सिंह
जन्म- 26.12.1899, बलिदान- 31.07.1940

राज माता जीजाबाई
जन्म- 12.01.1598, बलिदान- 17.06.1674

राम प्रसाद बिस्मिल
जन्म- 11.06.1897, बलिदान- 19.12.1927

चित्तरंजन दास
जन्म- 05.11.1870, बलिदान- 16.06.1925

॥ ओ३म् ॥

RNI/MPHIN/2009-28723
डाक पंजीयन संख्या।
MP/IDC/1533/2017-2019

वयं राष्ट्रे जागृयामः

वैदिक राष्ट्र

वेद, वैदिक साहित्य, आध्यात्मिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय अनुसंधानात्मक मासिक पत्रिका

संपादक – डॉ. आचार्य भानुप्रताप वेदालंकार
E-mail: vaidikrashtra@gmail.com

वर्ष–12 अंक–02 जनू 2020

❖ कार्यकारी संपादक ❖
राजवीर सिंह (झारखंड)
❖ सहसंपादक ❖
संदीप शजर (दिल्ली)
डॉ. विवेक आर्य (दिल्ली)
❖ प्रबंध संपादक ❖
गायत्री सोलंकी, (इन्दौर, म.प्र.)
प्रणवीर शास्त्री (बुलंदशहर, उ.प्र.)
❖ संपादक मंडल ❖
अमरसिंह वाचस्पति (ब्यावर, राजस्थान)
डॉ. नरेन्द्र वेदालंकार (हरिद्वार, उत्तराखंड)
श्रीमती मनीषा (शांति) विद्यालंकार (म.प्र.)
योगाचार्य उमाशंकर (सूरत, गुजरात)।
वीरेन्द्र सरदाना (दिल्ली)
सुखबीर शास्त्री (मुम्बई)
सत्यवीर (हरियाणा)
पवन कुमार शास्त्री (मथुरा)
सुनील कुमार शर्मा (शुजालपुर, म.प्र.)
नोट :– सभी पद अवैतनिक हैं।
ग्राफिक्स डिजाईनर - दर्शन बोरडे

अनुक्रमणिका

संपादकीय	- 02
वेदाऽमृतम्	- 03
रानी दुर्गावती का बलिदान	- 04-06
राम प्रसाद बिस्मिल	- 07-11
विश्व पर्यावरण दिवस	- 12-13
उधम सिंह	- 14-15
चित्तरंजन दास	- 16-17
रानी लक्ष्मीबाई	- 18-19
शिवाजी राज अभिषेक...	- 20
राजमाता जीजाबाई का इतिहास...	- 21-22
बुन्देलखण्ड का शेर: छत्रसाल...	- 23-24
भारतीय इतिहास के साथ एक...	- 25-30
तप, त्याग, विद्या, बल और...	- 31
प्रेरणादायक संस्मरण...	- 32

❖ मुख्य कार्यालय ❖
219, संचार नगर एक्स, कनाड़िया रोड़, इंदौर (म.प्र.), मो. 09977967777, 09977987777, 09202213410
Email: vaidikrashtra@yahoo.com, Website: www.vaidikrashtra.com
❖ दिल्ली कार्यालय ❖
संदीप शजर – एफ-5, विनायक अपार्टमेंट बुराड़ी (संतनगर) दिल्ली, मो. 09873534060

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक, आचार्य भानुप्रताप वेदालंकार द्वारा आर.टेक ग्राफिक्स 864/9, नेहरु नगर, इन्दौर से मुद्रित एवं 219, संचार नगर एक्सटेंशन कनाड़िया रोड़, इन्दौर से प्रकाशित। आर.एन.आई. नं./एम.पी.एच.आई.एन / 2009-28723

'वैदिक राष्ट्र' में प्रकाशित लेखों तथा विचारों से सम्पादक या प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है। सभी विवादों की परिस्थिति में न्याय क्षेत्र ''इन्दौर न्यायालय'' ही रहेगा।

श्रावण माह और देवशयनी एकादशी

भारतीय - वैदिक वर्ष मे ंचैत्र, वैशाल, ज्येष्ठ, आषाढ़, श्रावण भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक मार्गशीष, पौष, माघ, फाल्गुन माह है आर्यावर्त की संस्कृति में वैदिक वर्ष में माह के नाम भी पूर्णिमा के नक्षत्र से ही हुये है।

भारत में छः ऋतुएँ है- वर्षा, ग्रीष्म, शरद, हेमंत, शिशिर, वसंत। ऋतुओं के अनुसार ही हमारे जीवन शैली में परिवर्तन होते रहते है। भारत कृषि प्रधान देश है इसके कारण ही भारत के पर्व-त्यौहार-परम्परा-रीतिरिवाज अनेकों है।

मुख्यत: श्रावणी पर्व (रक्षा बंधन), विजयादशमी (दशहरा), शारदीय नवसस्येष्टि (दीपावली), वासन्ती नवसस्येष्टि (होली) आदि मुख्य पर्व है, इन पर्वो में शारदीय नवसस्येष्टि (दीपावली) पर्व में नया अन्न-धानी (चावल के धान) विशेष यज्ञ में आहूत किये जाते है। दीपावली पर्व में बाद में दीपों का त्यौहार भी मनाया जाने लगा है। दूसरा पर्व होली है। जिसमें कि नया अन्न गेहूँ ,चना यज्ञ में आदि आहूत किया जाता है। इस प्रकार से दीपावली और होली दोनों ही पर्व में नव-नया अन्न अग्नि देवता को डालने के कारण से नवसस्येष्टि पर्व कहलाता है।

रक्षा बंधन जिसे कि वैदिक परम्परा में श्रावणी पर्व या श्रावणी उपाकर्म भी कहते है। श्रावण माह में होने के कारण से यह पर्व श्रावणी पर्व कहलाता है। इस पर्व में विशेषकर वेदों का पठन-पाठन और श्रवण-श्रावण किया जाता है, इसी कारण से इस माह को श्रावण माह कहा गया है। वैसे तो पूर्णिमा के दिन का जो नक्षत्र होता है वही उस माह का नाम होता है। श्रावण पूर्णिमा को श्रवण नक्षत्र होता है इसलिए इस माह का श्रावण माह भी कहलाता है।

विजयादशमी (दशहरा) के दिन क्षत्रिय लोग अपने अस्त्र शस्त्रों को साफ करते है और क्षात्रधर्म को पालन करने के लिये इस दिन तैयार हो जाते है। वस्तुत: हमारी परम्परायें एक विशेष संदेश देती है।

वर्ष में दो अयन होते है उत्तरायण और दक्षिणायन होते है। आषाढ़ माह के शुक्ल पक्ष की एकादशी को **देवशयनी ग्यारस** के रुप में पौराणिक जगत मानता है और ऐसी भी गलत परम्परा है कि इस दिन से तथाकथित ब्रह्मा शयन करते है, इसलिये **देवशयनी ग्यारस से लेकर के दीपावली के पश्चात् आने वाली एकादशी तक** देव सोते है इसलिये इस समय में विवाह आदि शुभ कार्य नहीं करने चाहिये। वास्तव में देव कभी सोते ही नहीं है, देवता तो हमेशा जगते और वह परम पिता परमेश्वर तो हमेशा जागता रहता है। वह परम पिता परमेश्वर हमें प्रेरणा देता है कि हम अपने मन, बुद्धि और आत्मा को जगाकर तथाकथित रूढ़ि परम्पराओं को दूर करें।

कृषि प्रधान देश होने के कारण आषाढ़ माह के शुक्ल पक्ष से ही वर्षा ऋतु का प्रारम्भ हो जाता है और आषाढ़ माह के शुक्ल पक्ष एकादशी के दिन से देवशयनी एकादशी जिसे लोग कहते है। वर्षा ऋतु प्रारंभ होने के कारण से पहले सभी कार्य बंद हो जाते थे इसलिये तथाकथित पंडितों ने देव सो गये ऐसा कहना चालू कर दिया। दीपावली के पश्चात् आने वाली ग्यारस को देवप्रबोधयनी एकादशी कहते है अर्थात् देव जग जाते है। वास्तव में दीपावली के पश्चात् सभी के पास धन-धान्य आ जाता है और मौसम भी साफ हो जाता है इसलिये विवाह आदि कार्य करने में सुलभता होती थी, यही विशेष कारण है देव सोने का और जगने का। इसलिये हमें इन तथाकथित रूढ़िवादी परम्पराओं - कुरुतियों को छोड़कर वेद मार्ग के अनुसार चलना चाहिए।

इस प्रकार से वर-वधू के तथाकथित गुणों का मिलान करना, विवाह के मुहूर्त निकालना, जन्म पत्रिका बनाना फलित ज्योतिष के पीछे लठ्ठ लेकर आँख बंद करके मूर्ख बनना और अपने भाग्य को कोसना ये सब मूर्खता के लक्षण है। आओं हम वेद की परम्पराओं को, वेद-ज्ञान को, वैदिक सिद्धांत को माने और अपने जीवन को सुखी रखें।

डॉ. आचार्य भानुप्रताप वेदालंकार
E-mail: vaidikrashtra@gmail.com

वेदाऽमृतम्

मिलकर कर्त्तव्य पालन

सं जानामहै मनसा सं चिकित्वा मा युष्महि मनसा दैव्येन।
मा घोषा उत्स्थुर्बहुले विनिर्हते मेषु: पप्तदिन्द्रस्याहन्यागते ॥

-अथर्व. 7।52।2

ऋषि:- **अथर्वा** ॥ देवता- **सांमनस्यम्, अश्विनौ** ॥ छन्द:- **त्रिष्टुप्** ॥

विनय– हमें अपना सब सामूहिक सोचना-समझना मिलकर ही करना चाहिए। हम एक होकर, एकमत से ही किसी कार्य को प्रारम्भ करें। हम जो बहुत बार एकमत नहीं हो पाते हैं उसका कारण यह होता है कि हम 'दैव्य मन' से सोचना छोड़कर आसुर मन से विचारने लगते हैं।

आसुरीवृत्ति से, स्वार्थप्रेरित होकर, एक-दूसरे पर अविश्वास करते हुए, एक-दूसरे को तिरस्कृत करते हुए हम चलेंगे तो हम कभी भी एकमत नहीं हो सकेंगे, अत: हमें नि:स्वार्थ प्रेम से युक्त दैव्य-मन को कभी नहीं त्यागना चाहिए और एकमत हो, एक निश्चय के साथ सर्वहितकारी बड़े-से-बड़े काम को उठा लेना चाहिए तथा उसे एकभाव से ही प्रेरित हो चलाते जाना चाहिए।

फिर बड़ी-से-बड़ी भयंकर विपत्तियाँ आने पर भी विफल नहीं होना चाहिए। असफलताएँ और विघ्नों की रात्रियाँ तो प्रत्येक महान् कार्य में आया ही करती हैं। इन क्षुद्र असफलताओं पर हाहाकार मचाना तो क्या, यदि महादारुण प्रलय की रात्रि भी आ जाए और ये विशाल द्यौ और पृथिवी भी नष्ट होने लगें, तो भी हमें विचलित नहीं होना चाहिए अपितु अटल निष्ठा से अपनी साधना में लगे रहना चाहिए।

फिर इस रात्रि के बाद दिन आ जाने पर भी, सब अनुकूल अवस्थाएँ हो जाने पर भी, हमें मौज लूटने में ग्रस्त नहीं हो जाना चाहिए। अपने अन्तिम लक्ष्य को भूल विषय-भोगों, विजयोत्सवों में नहीं पड़ जाना चाहिए, क्योंकि ऐसे ही समय में 'इन्द्र का इषु' गिरा करता है, वज्रपात हुआ करता है, ईश्वरीय मार पड़ा करती है।

यह दैवी मार बहुत बुरी होती है। वे बड़े-बड़े साम्राज्य जोकि अपने बड़े दुर्दान्त शत्रुओं के घोर आक्रमणों को भी सह गये, पीछे से विषय-भोगों में ग्रस्त होकर स्वयमेव नष्ट हो गये, 'इन्द्र के इषु' से मारे गये, अत: आओ, अपने अंधकार के समय में भी और प्रकाशकाल में भी, हम कभी दैव मन को न छोड़ते हुए सदा मिलकर, खूब सोच-समझकर, एकमत से अपने सर्वोदय के महान् कार्यों को चलाते जाएँ।

शब्दार्थ– हम **मनसा**=मन द्वारा **सम्**=मिलकर **जानामहै**=विचारें और **चिकित्वा**=सोचना-समझना **सम्**=मिलकर करें; **दैव्येन मनसा**=दैव मन से **मा युष्महि**=कभी वियुक्त न हों, बिछुड़ें नहीं। **बहुले विनिर्हते**=अन्धकार आ जाने पर या विशाल द्यावापृथिवी के टूटने पर भी **घोषा: मा उत्स्थु:**=हमारे अन्दर हाहाकार के शब्द न उठें और **अहनि आगते**=दिन आ जाने पर, अनुकूल स्थिति पा जाने पर **इन्द्रस्य इषु:**=इन्द्र का इषु, ईश्वरीय मार **मा पप्तम्**=हमपर न पड़े।

रानी दुर्गावती का बलिदान

जन्म– 05.10.1524 | बलिदान– 24.06.1564

रानी दुर्गावती (5 अक्टूबर 1524 – 24 जून 1564) भारत की एक वीरांगना थीं । महोबा के चंदेल राजा सालबाहन की पुत्री थी । जिन्होने अपने विवाह के चार वर्ष बाद अपने पति गोंड राजा दलपत शाह की असमय मृत्यु के बाद अपने पुत्र वीरनारायण को सिंहासन पर बैठाकर उसके संरक्षक के रूप में स्वयं शासन करना प्रारंभ किया। इनके शासन में राज्य की बहुत उन्नति हुई। दुर्गावती को तीर तथा बंदूक चलाने का अच्छा अभ्यास था। चीते के शिकार में इनकी विशेष रुचि थी। उनके राज्य का नाम गोंडवाना, था जिसका केन्द्र जबलपुर था। वे इलाहाबाद के मुगल शासक आसफ खान से लोहा लेने के लिये प्रसिद्ध हैं।

रानी दुर्गावती कालिंजर के राजा कीर्तिवर्मन / कीर्तिसिंह चंदेल की एकमात्र संतान थीं। चंदेल लोधी राजपूत वंश की शाखा का ही एक भाग है । बांदा जिले के कालिंजर किले में 1524 ईसवी की दुर्गाष्टमी पर जन्म के कारण उनका नाम दुर्गावती रखा गया। नाम के अनुरूप ही तेज, साहस, शौर्य और सुन्दरता के कारण इनकी प्रसिद्धि सब ओर फैल गयी। दुर्गावती के मायके और ससुराल पक्ष की जाति भिन्न थी लेकिन फिर भी दुर्गावती की प्रसिद्धि से प्रभावित होकर गोण्डवाना साम्राज्य के राजा संग्राम शाह ने अपने पुत्र दलपत शाह मडावी से विवाह करके, उसे अपनी पुत्रवधू बनाया था।

दुर्भाग्यवश विवाह के चार वर्ष बाद ही राजा दलपतशाह का निधन हो गया। उस समय दुर्गावती की गोद में तीन वर्षीय नारायण ही था। अतः रानी ने स्वयं ही गढ़मंडला का शासन संभाल लिया। उन्होंने अनेक मठ, कुएं, बावड़ी तथा धर्मशालाएं बनवाईं। वर्तमान जबलपुर उनके राज्य का केन्द्र था। उन्होंने अपनी दासी के नाम पर चेरीताल, अपने नाम पर रानीताल तथा अपने विश्वस्त दीवान आधारसिंह के नाम पर आधारताल बनवाया। रानी दुर्गावती चंदेल का यह सुखी और सम्पन्न राज्य पर मालवा के मुसलमान शासक बाजबहादुर ने कई बार हमला किया, पर हर बार वह पराजित हुआ। मुगल शासक अकबर भी राज्य को जीतकर रानी को अपने हरम में डालना चाहता था। उसने विवाद प्रारम्भ करने हेतु रानी के प्रिय सफेद हाथी (सरमन) और उनके विश्वस्त वजीर आधारसिंह को भेंट के रूप में अपने पास भेजने को कहा। रानी ने यह मांग ठुकरा दी। इस पर अकबर ने अपने एक रिश्तेदार आसफ खां के नेतृत्व में गोण्डवाना साम्राज्य पर हमला कर दिया। एक बार तो आसफ खां पराजित हुआ, पर अगली बार उसने दुगनी सेना और तैयारी के साथ हमला बोला। दुर्गावती के पास उस समय बहुत कम सैनिक थे। उन्होंने जबलपुर के पास नरई नाले के किनारे मोर्चा लगाया तथा स्वयं पुरुष वेश में युद्ध का नेतृत्व किया। इस युद्ध में 3,000 मुगल सैनिक मारे गये लेकिन रानी की भी अपार क्षति हुई थी।

अगले दिन 24 जून 1564 को मुगल सेना ने फिर हमला बोला। आज रानी का पक्ष दुर्बल था, अतः रानी ने अपने पुत्र नारायण को सुरक्षित स्थान पर भेज दिया। तभी एक तीर उनकी भुजा में लगा, रानी ने उसे निकाल फेंका। दूसरे तीर ने उनकी आंख को बेध दिया, रानी ने इसे भी निकाला पर उसकी नोक आंख में ही रह गयी। तभी तीसरा तीर उनकी गर्दन में आकर धंस गया।

रानी ने अंत समय निकट जानकर वजीर आधारसिंह से आग्रह किया कि वह अपनी तलवार से उनकी गर्दन काट दे, पर वह इसके लिए तैयार नहीं हुआ।

अतः रानी अपनी कटार स्वयं ही अपने सीने में भोंककर आत्म बलिदान के पथ पर बढ़ गयीं। महारानी दुर्गावती चंदेल ने अकबर के सेनापति आसफ खान से लड़कर अपनी जान गंवाने से पहले पंद्रह वर्षों तक शासन किया था। जबलपुर के पास जहां यह ऐतिहासिक युद्ध हुआ था, उस स्थान का नाम बरेला है, जो मंडला रोड पर स्थित है, वही रानी की समाधि बनी है, जहां गोण्ड जनजाति के लोग जाकर अपने श्रद्धासुमन अर्पित करते हैं। जबलपुर में स्थित रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय भी इन्ही रानी के नाम पर बनी हुई है।

रानी दुर्गावती के सम्मान में 1983 में जबलपुर विश्वविद्यालय का नाम बदलकर रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय कर दिया गया । भारत सरकार ने 24 जून 1988 रानी दुर्गावती के बलिदान दिवस पर एक डाक टिकट जारी कर रानी दुर्गावती को याद किया। जबलपुर में स्थित संग्रहालय का नाम भी रानी दुर्गावती के नाम पर रखा गया । मंडला जिले के शासकीय महाविद्यालय का नाम भी रानी दुर्गावती के नाम पर ही रखा गया है। रानी दुर्गावती की याद में कई जिलों में रानी दुर्गावती की प्रतिमाएं लगाई गई हैं और कई शासकीय इमारतों का नाम भी रानी दुर्गावती के नाम पर रखा गया है।

शेरशाह सूरी युद्ध— कालिंजर नरेश महाराज श्रीकीर्तिराज शाह शेरशाह सूरी की सेनाओं से भीषण युद्ध करते हुए कई बहुत गहरे घाव खा गए। चंदेल सैनिक उन्हें मूच्छित अवस्था में पालकी में डालकर किसी प्रकार दुर्ग में ले आए। राजकीय चिकित्सक उनकी चिकित्सा में लग गए ।समस्त वातावरण में भय व्याप्त था। सूरी के सैनिक दुर्ग के सुदृढ़ कपाटों को भग करने का प्रयत्न कर रहे थे। सूरी सैनिकों के शवों और तीखे भालों से बिंधे हुए, करुण चिंगघाड़ों से आकाश को प्रकम्पित करने वाली दहाड़ों से खड़े—खड़े विशाल गजराज दुर्ग द्वार के रक्षक आश्चर्यजनक रूप से बन गए। द्वार से निराश होकर सूरी ने अपनी रणनीति में परिवर्तन कर डाला। दुर्ग के पीछे की दीवार जो अपेक्षाकृत कम ऊंची थी, उसके नीचे लकड़ी का ढालदार प्रशस्त मंच बना कर सूरी के सैनिक बारूद की मोटी तह बिछने लगे। दुर्ग से अपने विरोध में कोई प्रतिक्रिया न देखकर, उनका साहस बढ़ता जा रहा था। उधर गढ़ के अंदर नारियों के सम्मान की रक्षा के लिए लकड़ियों के ढेर लगने लगे।

दुधमुंहे बच्चों और विशेषकर प्रत्येक आयु की कन्याओं को लेकर उनके चारों ओर नारिएँ एकत्रित होने लगीं। चौराहे—चौराहे पर रखे केसर के घोल में रंग—रौग कर पुरुष केसरिया परिधान धारण करने लगे। किसी भी क्षण बारूद के भीषण विस्फोट से गढ़ की दीवार द्वार का रूप ग्रहण कर सूरी के नृशंस सैनिकों को निबांध प्रवेश का मार्ग प्रदान कर सकती थी। तभी उन्होंने देखा कि पूर्ण श्रृंगार करके महाराज कुमारी दुर्गावती अपनी पाँच—सात समवयस्क सहेलियों के साथ सिंहवाहिनी भवानी की गति से बढ़ती चली आ रही हैं। वह आदेशात्मक स्वर से बोली "न कोई इन लकड़ियों के पर्वताकार देर में पलीता लगाए और न कोई गढ़ के कपाट खोलकर बाहर निकलने का विचार करे। हम दुर्ग शिखर पर जा रही हैं। स्थिति का आकलन कर शंख ध्वनि पर सभी अपने—अपने आवासों पर लौट जाएँ अन्यथा दुर्ग शिखर से सर्वप्रथम मैं, प्रमुख देर पर क्ट्रेंगी। तब शीघ्रतापूर्वक पलीते लगा दिए जाएँ। महाराजा को यद्यपि घाव गंभीर लगे हैं किन्तु वे जीवित हैं।"

—कहती हुई राजकुमारी दुर्गावती अजयगढ़ के प्रमुख शिखर की ओर बढ़ चली। देखा कि बारूद बिछाने का कार्य स्वयं शेरशाह सूरी की निगरानी में विद्युतगति से हो रहा है। वह सूरी का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने के लिए ताली बजाकर हंस पड़ी शेरशाह सूरी ने जो ही उसकी ओर देखा, वहीं से ऊंचे स्वर से बोली, "शहंशाहे हिंद जनाबे आली महाराजा कुछ ही क्षण के मेहमान हैं। कालिंजर का राजसिंहासन हमारे अधिकार में है। बोलो तुम क्या चाहते हो? मैं तुम्हारा वरण करने को तैयार हूँ। इसके अतिरिक्त तुम्हारी और जो कोई शर्त हो, वह लिखकर अपने किसी दूत को भेज दो अथवा हम यहीं से एक डोल लटका रही हैं, उसमें रखा दो।

शाह कालिंजर के साथ अपनी सेना की भी रक्षा करो, उन्हें प्राणदान दो। जब कालिंजर अपनी शासिका सहित तुम्हें अपना शासक स्वीकार करने को तैयार है तो व्यर्थ के खून–खराबे से बचना उचित होगा। अपने वजीर से कही संधि पत्र तैयार करे। अपने सैनिकों से कहो गढ़ का मार्ग साफ करें। ताकि शान से आपकी सवारी गढ़ में तशरीफ ला सके। हम अपने क्रोधित सैनिकों को मुकाबले से आपका संकेत पाते ही तुरंत रोक देंगी।" सूरी दुर्गावती के शब्द सुनकर अपने वजीरों से परामर्श करने लगा।

संधिपत्र तैयार होने लगा किंतु राजकुमारी दुर्गावती से उनका बारूद बिछाने का कार्य गोपनीय रूप से होता हुआ छिपा नहीं रह सका। कालिंजर के सैनिक भी उसी गोपनीय रीति से धीरे–धीरे किंतु तीव्र गति से बारूद को भिगोने लगे। उधर सूरी सैनिक अपने सैनिकों और भालों से बिंधे हुए हाथियों को मोटी–मोटी श्रृंखला डालकर खींचने लगे। इधर कालिंजर के सैनिक पर्याप्त मात्रा में मुख्य द्वार के ऊपर मोटी–मोटी कनातें लगाकर तेल–पानी खौलाने लगे। बड़ी–बड़ी शिलाएँ एकत्रित करने लगे।

प्रत्येक बुर्ज पर तीरन्दाजों को ढेरों बाण और पलीते दे–देकर बैठाया जाने लगा। शांतिपूर्वक मुख्य द्वार का मार्ग सूरी सैनिकों ने साफ करके संधिपत्र की स्याही सूखने से पूर्व ज्यों ही आक्रमण किया, ऊपर से पहले से भी अधिक शिलाएँ तेल–पानी बरसने लगे। तीखे तीरों ने सूरी सैनिकों के हरावली दस्तों को बांध डाला। सूरी शेरशाह दगा दगा कहते हुए जो ही बारूदी मंच से उतरने लगा, त्यों ही उसके पीछे राजकुमारी दुर्गा और उनकी सखियों के धनुषों से धधकते हुए अग्नि बाण गिरने लगे।

बारूद, बिना आँखों वाला बारूद, सौ–सौ लपलपाती जिहवाओं वाला बारूद, गगनचुंबी लपटें लहराने लगा। अपने अंगरक्षकों सहित शहंशाहेहंद जनाबेआला गाजी–काजी जैसी कितनी उपाधिएँ लादे वह लंपट पाजी कोयलों के ढेर का एक कोयला बन कर रह गया। चंदेल सुभटगढ़ का द्वार खोलकर सूरी सैनिकों पर वज की भाँत टूट पड़े। 22 मई 1545 को शेरशाह मार दिया गया था।

सदस्यता आवेदन - पत्र

(नाम, पता तथा पिन कोड, फोन नम्बर, निम्न फार्म में साफ - साफ अक्षरों में लिखकर भेजें।)

नाम .... **उम्र** .... **दिनांक** ....

पता ....

शहर .... **राज्य** .... **पिन** ....

फोन .... **मोबाइल** ....

चैक / मनीऑर्डर/डी.डी. नम्बर .... **रुपये** ....

ड्राफ्ट/चैक / मनीऑर्डर ''**वैदिक राष्ट्र**'' के नाम से '**वैदिक राष्ट्र**' कार्यालय - 219, संचार नगर एक्सटेंशन, कनाड़िया रोड़, इन्दौर (म.प्र.) 452016 अथवा बैंक ऑफ महाराष्ट्र - शाखा: कनाड़िया रोड़, इन्दौर में सीधे खाता क्रं. 6003657384, IFSC Code: MAH0001396 में जमा कराएं।

राम प्रसाद बिस्मिल

जन्म तिथि : 11–06–1897

जन्म स्थान : शाहजहाँपुर, उत्तर प्रदेश, भारत

मृत्यु तिथि : 19–12–1927

मृत्यु का स्थान : गोरखपुर, उत्तर प्रदेश, भारत

मौत का कारण : अंग्रेजों द्वारा फांसी

पिता : पंडित मुरलीधर

माँः मूलमती– राम प्रसाद बिस्मिल 'एक भारतीय क्रांतिकारी थे, जिन्होंने 1918 के मैनपुरी षडयंत्र और 1925 के ऐतिहासिक काकोरी षड्यंत्र केस में ब्रिटिश साम्राज्य के खिलाफ भाग लिया था। बिस्मिल उनका कलम–नाम था। वे आर्य समाज, शाहजहाँपुर से जुड़े हुए थे जहाँ उन्हें स्वामी दयानंद सरस्वती द्वारा लिखित पुस्तक ''सत्यार्थ प्रकाश'' से प्रेरणा मिली। उन्होंने अपने गुरु स्वामी सोमदेव के माध्यम से लाला हर दयाल के साथ गोपनीय संबंध बनाए, जो आर्य समाज के प्रसिद्ध उपदेशक थे।

बिस्मिल हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन के संस्थापक सदस्यों में से एक थे, एक ऐतिहासिक क्रांतिकारी संगठन जो अपनी विचारधारा और संविधान के लिए काले और सफेद में जाना जाता है। वह उर्दू और हिंदी के एक महान कवि–लेखक थे। कई प्रेरक देशभक्ति छंद उसके लिए जिम्मेदार हैं। प्रसिद्ध कविता सरफरोशी की तमन्ना भी उनके लिए लोकप्रिय है, हालांकि कुछ तथाकथित प्रगतिशील लेखकों ने टिप्पणी की है कि बिस्मिल 'अजीमाबादी ने वास्तव में कविता लिखी थी और राम प्रसाद बिस्मिल ने इसे अमर कर दिया था लेकिन उनकी टिप्पणियों का कोई प्रमाण नहीं है।

भारत से बिस्मिल शताब्दी वर्ष–1997 में प्रकाशित सरफरोशी की तमन्ना (4–वॉल्यूम) नामक पुस्तक अब कई पुस्तकालयों में उपलब्ध है।

पं. राम प्रसाद बिस्मिल 'का जन्म 11 जून 1897 को उत्तर प्रदेश के ऐतिहासिक शहर शाहजहाँपुर में हुआ था। वह तोमर राजपूत थे। उनके पितामह नारायण लाल अपने पैतृक गाँव बरबई से पलायन कर गए थे और एक बहुत दूर के स्थान पर शाहजहाँपुर में बस गए। बारबाई ब्रिटिश काल में ग्वालियर की तत्कालीन संपत्ति के तोमरधर क्षेत्र में चंबल नदी के तट पर स्थित थी। आजकल यह गाँव मध्य प्रदेश के मुरैना जिले के अंतर्गत आता है। बिस्मिल मुरलीधर के पिता शाहजहाँपुर शहर के खिरनी बाग मोहल्ले में रहते थे, जहाँ राम प्रसाद का जन्म हुआ था।

बचपन में राम प्रसाद को एक स्थानीय प्राइमरी स्कूल में भेजा गया था, लेकिन उन्हें हिंदी सीखने की बहुत आदत थी क्योंकि एक हिंदी वर्णमाला न जिसे 'उल्लू' के लिए 'न' के रूप में पढ़ाया जाता था। जब उनके पिता मुरलीधर उन्हें यू नहीं सीखा सकते थे हर प्रयास के बावजूद, उन्होंने उर्दू माध्यम से राम प्रसाद को शिक्षित करने का फैसला किया और उन्हें शाहजहाँपुर के इस्लामिया स्कूल में भर्ती कराया गया।

जैसे ही वह बड़ा हुआ वह गंदी छात्राओं के हाथों में खेला गया और रोमांटिक कविता की किताबें और सस्ते उपन्यास पढ़ने की कुछ बुरी आदतों ने उसका करियर खराब कर दिया। जब वे उर्दू के 7 वीं कक्षा में दो बार असफल हुए, तो उन्हें शहर के मिशन स्कूल नामक एक अंग्रेजी स्कूल में भर्ती कराया गया।

प्रथम श्रेणी में मिशन स्कूल से 8 वीं कक्षा उत्तीर्ण करने के बाद, उन्होंने सरकारी स्कूल, शाहजहाँपुर में प्रवेश लिया। इस स्कूल में पढ़ाई के दौरान, उन्होंने अपना कलम–नाम 'बिस्मिल' रखा और देशभक्ति कविता लिखना जारी रखा। जब वे 9 वीं कक्षा के छात्र थे, तब उन्होंने अखबार में पढ़ा कि एक प्रसिद्ध विद्वान और लाला हर दयाल के साथी भाई परमानंद की मौत की सजा के बारे में एक समाचार था। राम प्रसाद उस समय मुश्किल से 18 साल के थे। उन दिनों वे रोजाना शाहजहाँपुर के आर्य समाज मंदिर जाते थे, जहाँ स्वामी परमानंद – भाई परमानंद के एक दोस्त रहते थे। इस घटना से राम प्रसाद के मन में एक क्रोध का भाव फूट पड़ा था। उन्होंने तुरंत हिंदी में एक कविता की रचना की जिसका शीर्षक था मेरा जन्म और इसे स्वामी सोमदेव को दिखाया। उस कविता में उन्होंने ब्रिटिश साम्राज्य को भारत से बाहर करने की प्रतिबद्धता दिखाई थी।

पिछला नामः बिस्मिल– स्वामीजी ने एक गहरी आह के साथ कविता पढ़ी और कुछ मिनटों के लिए मम्मी को रखा। सामान्य होने के बाद, वह बोला – "राम प्रसाद! मुझे पता है कि आप दिल से बहुत आहत हैं और तदनुसार मैंने Name बिस्मिल 'के रूप में आपका पेन–नाम चुना है। आपकी कविता भी देशभक्ति की भावनाओं से भरी है और आपके विचार बहुत स्पष्ट हैं लेकिन, मेरे प्यारे बच्चे! प्रतिबद्धता को पूरा करना इतना आसान नहीं है जब तक कि एक ठोस दृढ़ संकल्प आपके दिल और दिमाग में टिके नहीं। " स्वामीजी के तर्क और प्रतिवाद के बावजूद, राम प्रसाद अपनी प्रतिबद्धता से विचलित नहीं हुए। जब स्वामीजी ने अपनी आंखों में क्रांति की ज्वाला देखी, तो उन्होंने उन्हें खुद को राजनीतिक रूप से तैयार करने और 1916 की अगली कांग्रेस में सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए लखनऊ जाने की सलाह दी। अगले साल राम प्रसाद ने स्कूल छोड़ दिया और अपने दोस्तों के साथ लखनऊ चले गए।

शहर में किसी भी प्रकार के तिलक के स्वागत के लिए उदार समूह को अनुमति देने के लिए उदार समूह तैयार नहीं था। बिस्मिल ने एम. ए के एक वरिष्ठ छात्र के साथ मिलकर तिलक की कार ली और पूरे शहर में बाल गंगाधर तिलक के जुलूस का नेतृत्व किया। राम प्रसाद को वहां उजागर किया गया था और पूरे भारत के कई युवा उनके प्रशंसक बन गए। उन्होंने युवाओं के एक समूह को संगठित किया और एक पुस्तक प्रकाशित करने का निर्णय लिया। यह पुस्तक हिंदी में अमेरिकी स्वतंत्रता के इतिहास पर लिखी गई थी और इसका शीर्षक स्वामी की सोमदेव की सहमति से अमेरिका की स्वातंत्रता का इतिहस दिया गया था। यह पुस्तक बाबू हरिवंश सहाय के काल्पनिक नाम से प्रकाशित हुई थी, बी.ए. और इसके प्रकाशक का नाम सोमदेव सिद्धगोपाल शुक्ला था। जैसे ही1919 से 1920 तक बिस्मिल भूमिगत रहे, कुछ समय के लिए वर्तमान गौतमबुद्ध नगर जिले के रामपुर जागीर/जहाँगीर गाँव में, कभी मैनपुरी जिले के कोसमा में, कभी आगरा जिले के बाह और पिनाहट में। (सभी यू.पी. राज्य में)। वह म.प्र। में अपने पैतृक गाँव बरबई भी गए।

अपनी माँ से कुछ पैसे लेने के लिए। भूमिगत रहते हुए उन्होंने कुछ किताबें भी लिखीं। ये पुस्तकें मन की लुहार–कविताओं का एक संग्रह थीं, बोल्शेविकों की कार्तिक–एक क्रांतिकारी उपन्यास, योगिक साधना–योग की एक पुस्तिका जो यह बताती है कि किसी के मन में दृढ़ संकल्प कैसे पैदा किया जाए और कैथरीन या स्वाधिनी देवी–कैथरीन की एक आत्मकथात्मक आत्मकथा। रूसी क्रांति की भव्य माँ। इन पुस्तकों में से केवल मन का लाहर 'बिस्मिल' और उनके समकालीन कवियों द्वारा लिखी गई कविताओं का एक संग्रह था, जबकि बोल्शेविकों की करतूत और योगिक साधना का बंगला से अनुवाद किया गया था और कैथरीन या स्वेतिन की देवी को अंग्रेजी से गढ़ा गया था। उन्होंने सुशीलमाला के तहत अपने स्वयं के संसाधनों के माध्यम से इन सभी पुस्तकों को प्रकाशित किया – एक योगिक साधना को छोड़कर प्रकाशन की एक श्रृंखला जो एक प्रकाशक को दी गई थी जो फरार हो गया था और उसका

पता नहीं लगाया जा सका। अब इन सभी पुस्तकों को एक विद्वान 'क्रान्त' एम.एल. वर्मा द्वारा खोजा गया है और ये पुस्तकालयों में उपलब्ध हैं।

कैथरीन या स्वाधिंता की देवी और योगिक साधना को सरफरोशी की तमन्ना (खंड– 3) में संकलित और संपादित किया गया है, जबकि मन की लुहार और बोल्शेविकों की कार्तिक को अलग–अलग प्रकाशित किया गया है। पंडित राम प्रसाद की दूसरी पुस्तक 'बिस्मिल' उनकी 1933 में प्रकाशित हुई थी। मृत्यु जो ब्रिटिश राज द्वारा 1931 में मुकदमा चलाया गया था। इस पुस्तक का नाम "क्रांति गीतांजलि" था। यह उनकी सूची नंबर 891431-B-541-K के तहत इंपीरियल लाइब्रेरी में आरक्षित रखा गया था। इस संख्या में B लेखक के नाम के लिए और K पुस्तक के नाम के लिए है। भारत के अभिलेखागार को यह पुस्तक उनके प्रवेश संख्या 961 के तहत मिली थी। अब यह पुस्तक भारत में प्रकाशित हो गई है और पुस्तकालयों में उपलब्ध है।

फरवरी 1920 में, जब मैनपुरी षड्यंत्र केस के सभी कैदियों को सरकार के अधीन छोड़ दिया गया था। उद्घोषणा, 'बिस्मिल' अपने मूल स्थान शाहजहाँपुर लौट आया और जिला अधिकारियों से मिला। उन्होंने राम प्रसाद को किसी भी क्रांतिकारी गतिविधि में भाग नहीं लेने की घोषणा करने का वचन देने का शपथ पत्र लेने के बाद शांति से रहने दिया। वह कभी–कभी प्रबंधक के रूप में भारत सिल्क विनिर्माण कंपनी में शामिल हो गए और उसके बाद बनारसी लाल की साझेदारी में रेशम साड़ियों का व्यवसाय शुरू किया। बनारसी लाल और राम प्रसाद बिस्मिल '– ये दोनों शाहजहाँपुर की जिला कांग्रेस कमेटी से जुड़े थे। हालाँकि बिस्मिल ने व्यवसाय में नाम और प्रसिद्धि अर्जित की लेकिन वह बिल्कुल भी संतुष्ट नहीं थे क्योंकि भारत से अंग्रेजों को बाहर निकालने की उनकी पहले की प्रतिबद्धता पूरी नहीं हुई थी।

1921 में बिस्मिल 'ने शाहजहाँपुर से बड़ी संख्या में स्वयंसेवकों के साथ अहमदाबाद कांग्रेस में भाग लिया और डायस पर एक स्थान पर कब्जा कर लिया। उनके साथ एक वरिष्ठ कांग्रेसी प्रेम कृष्ण खन्ना भी थे। उन्होंने मौलाना हसरत मोहानी के साथ कांग्रेस में सक्रिय भूमिका निभाई और पूर्ण स्वराज का सबसे विवादित प्रस्ताव कांग्रेस की आम सभा की बैठक में पारित किया। गांधीजी, जो इस प्रस्ताव के पक्ष में नहीं थे, युवाओं की भारी मांग के आगे काफी असहाय हो गए। यह कांग्रेस के लिबरल ग्रुप के खिलाफ बिस्मिल की एक और जीत थी। वह शाहजहाँपुर लौट आए और संयुक्त प्रांत के युवाओं को सरकार के साथ असहयोग के लिए लामबंद किया।

यूपी के लोग बिस्मिल के उग्र भाषणों और छंदों से इतने प्रभावित थे कि वे ब्रिटिश शासन के खिलाफ शत्रुतापूर्ण हो गए। फरवरी 1922 में कुछ आंदोलनकारी किसानों को पुलिस द्वारा चौरी–चौरा में मार दिया गया। यह मुख्य कारण था जिसने आम जनता को प्रभावित किया। चौरी–चौरा के पुलिस स्टेशन पर कदम से हमला किया गया और 22 पुलिसकर्मियों को जिंदा जला दिया गया। गांधीजी ने इस घटना के पीछे के तथ्य का पता लगाए बिना असहयोग आंदोलन को तुरंत रोकने की घोषणा की। उन्होंने कांग्रेस के एक भी कार्यकारी समिति के सदस्य को अपने विश्वास में नहीं लिया और पार्टी तानाशाह के रूप में काम किया। राम प्रसाद बिस्मिल 'ने अपने युवाओं के समूह के साथ 1922 के गया कांग्रेस में गांधीजी का कड़ा विरोध किया। जब गांधीजी ने अपना फैसला वापस नहीं लेने का विरोध किया तो कांग्रेस पार्टी दो समूहों में विभाजित हो गई– एक उदारवादी और दूसरा विद्रोही। जनवरी 1923 में, पार्टी के अमीर समूह ने पं. के संयुक्त नेतृत्व में एक नई स्वराज पार्टी का गठन किया। मोती लाल नेहरू और चित रंजन दास जबकि युवा वर्ग जो आम जनता का प्रतिनिधित्व कर रहे थे, उन्होंने राम प्रसाद बिस्मिल 'के नेतृत्व में एक क्रांतिकारी पार्टी बनाने की घोषणा की।

लाला हर दयाल की सहमति से, राम प्रसाद 'बिस्मिल' इलाहाबाद गए, जहां उन्होंने शचींद्र नाथ सान्याल और बंगाल के एक अन्य क्रांतिकारी डॉ. यदु गोपाल मुखर्जी की मदद से पार्टी के संविधान का मसौदा तैयार किया। संगठन के नाम, उद्देश्य, फ्रेम और दावे को एक येलो पेपर पर टाइप किया गया था और एक संवैधानिक समिति की बैठक 3 अक्टूबर 1924 को कानपुर में यू.पी. शचींद्र नाथ सान्याल की अध्यक्षता में इस बैठक में पार्टी का नाम हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन के रूप में तय किया गया था और दूसरों से लंबी चर्चा के बाद राम प्रसाद पस बिस्मिल 'को शाहजहाँपुर का जिला संगठक और शस्त्र प्रभाग का प्रमुख घोषित किया गया था।

संयुक्त प्रांत (आगरा और अवध) के प्रांतीय आयोजक की एक अतिरिक्त जिम्मेदारी भी उन्हें सौंपी गई थी। शचींद्र नाथ सान्याल को गुमनाम रूप से राष्ट्रीय आयोजक के रूप में नामित किया गया था और एक अन्य वरिष्ठ सदस्य योगेश चंद्र चटर्जी को समन्वयक, अनुशीलन दल की जिम्मेदारी दी गई थी। कानपुर में बैठक में भाग लेने के बाद, सान्याल और चटर्जी दोनों ने यू.पी. और बंगाल चला गया।

जनवरी 1925 में किसी अज्ञात स्थान से विजय कुमार के काल्पनिक नाम से एक क्रांतिकारी नाम का एक पुस्तिका प्रकाशित किया गया था और पूरे भारत में प्रसारित किया गया था। यह 4 पृष्ठों का एक पैम्फलेट था जिसमें क्रांतिकारियों के कार्यक्रम या घोषणापत्र को भारतीय जनता के लिए एक अवसर के साथ घोषित किया गया था, चाहे वह सामाजिक स्थिति उच्च या निम्न, अमीर या गरीब हर व्यक्ति के लिए समान अवसर के लिए हो।

महात्मा गांधी की नीतियों की खुलेआम आलोचना की गई और युवाओं को संगठन में शामिल होने के लिए बुलाया गया। पुलिस पैम्फलेट की भाषा देखकर हैरान थी और बंगाल में अपने नेता को खोज रही थी। शचीनाथ नाथ सान्याल एक थोक में इस पर्चे को तुड़वाने के लिए गए थे और उन्हें बांकुरा, पश्चिम बंगाल में गिरफ्तार किया गया था। शचीन की गिरफ्तारी से पहले योगेश चंद्र चटर्जी बंगाल में कलकत्ता के हावड़ा रेलवे स्टेशन पर पुलिस के हाथों में चले गए थे।

Of H.R.A. 'के दोनों वरिष्ठ संगठक की गिरफ्तारी के बाद पार्टी चलाने की कुल जिम्मेदारी राम प्रसाद पस बिस्मिल' के कंधों पर आ गई थी। जिला आयोजक पैसे की मांग कर रहे थे। वे बिस्मिल 'के लिए बहुत संवेदनशील पत्र लिख रहे थे –" पंडित जी! हम भूख से मर रहे हैं, कृपया कुछ करें "बिस्मिल अपनी दयनीय स्थिति के लिए खुद को दोषी महसूस कर रहे थे। उन्होंने आयरिश क्रांतिकारियों की तरह पैसा इकट्ठा करने का फैसला किया ताकि समाज के अमीर लोगों से जबरन पैसे छीन लिए जा सकें। इसलिए उसने पैसे लूटने की दो वारदातों को अंजाम दिया, एक पीलीभीत जिले के बिचपुरी में। और दूसरा यूपी के प्रतापगढ़ जिले के द्वारकापुर में, लेकिन इन कार्यों में से किसी में भी पर्याप्त धन नहीं मिला।

लकड़ी के स्टॉक के साथ इन मौसर पिस्तौल का उपयोग काकोरी ट्रेन डकैती में पंडित राम प्रसाद बिस्मिल और उनके साथी हाइमेन द्वारा किया गया था।

बिस्मिल ने यूपी में लखनऊ के पास काकोरी में एक ट्रेन में किए गए सरकारी खजाने को लूटने की एक हास्यास्पद योजना को अंजाम दिया। यह ऐतिहासिक घटना 9 अगस्त 1925 को हुई और इसे काकोरी ट्रेन रॉबरी के नाम से जाना जाता है। केवल 10 क्रांतिकारियों ने 8 डाउन सहारनपुर–लखनऊ पैसेंजर ट्रेन को काकोरी– लखनऊ रेलवे जंक्शन से ठीक पहले एक स्टेशन पर रोक दिया। इस कार्रवाई में जर्मन निर्मित मौसर अर्ध–स्वचालित पिस्तौल का उपयोग किया गया था। अशफाक उल्लाह खान, एच.आर.ए. प्रमुख राम प्रसाद बिस्मिल ने गुप्ता को उनके मौसेरे भाई को दे दिया और खुद व्यस्त किया।

उत्सुकता से अपने हाथ में एक नया हथियार देखते हुए, मनमंथ नाथ गुप्ता ने पिस्तौल से फायर किया और इस तेजी से कार्रवाई में एक यात्री अहमद अली मारा गया।

इस घटना ने ब्रिटिश भारत में बहुत उथल–पुथल मचा दी। जब पूरे भारत से 40 से अधिक क्रांतिकारियों को गिरफ्तार किया गया था तब प्रतिशोध गंभीर था। ब्रिटिश सरकार के आधिकारिक रिकॉर्ड के अनुसार, H.R.A के 28 सक्रिय सदस्यों के खिलाफ आपराधिक साजिश का मुकदमा दायर किया गया था। विशेष मजिस्ट्रेट ऐनुद्दीन द्वारा लंबे समय के बाद।

21 व्यक्तियों को 21 मई 1926 को सत्र न्यायालय के विशेष न्यायाधीश ए हैमिल्टन के सामने पेश किया गया। अब्बास सलीम खान, बनवारी लाल भार्गव, ज्ञान चत्तरजी और मो. आयुफ न्यायाधीश के मूल्यांकनकर्ता (कानूनी सलाहकार) थे।

6 अप्रैल, 1927 को अदालत का फैसला लखनऊ की विशेष अदालत से बाहर आया। यह विशेष अदालत तत्कालीन ब्रिटिश सरकार द्वारा रिंग थियेटरे– लखनऊ की एक प्रसिद्ध इमारत में स्थापित की गई थी। उस ऐतिहासिक स्थान को भी ब्रिटिश सरकार ने बाद में 1929 में ध्वस्त कर दिया था और 1929–1932 में जमीन के ऊपर जनरल पोस्ट ऑफिस बनाया गया था।

कोर्ट के फैसले को 115 पृष्ठों में प्रकाशित किया गया था और आरोप इस तरह साबित हुए थे कि कोई भी निकाय बच नहीं सकता था सजा से अशफाक उल्ला खान और शचींद्र नाथ बख्शी के खिलाफ विशेष न्यायाधीश जे. आर.डब्ल्यू. विनयोट की अदालत में एक और पूरक मामला दायर किया गया था। 18 जुलाई 1927 को अवध के तत्कालीन मुख्य न्यायालय (अब यू.पी. में) में एक अपील दायर की गई थी।

एक बहुत ही वरिष्ठ अधिवक्ता पं. जगत नारायण मुल्ला ने सरकारी वकील के रूप में मामले की पैरवी की, जबकि राम प्रसाद ended बिस्मिल 'ने अपने मामले का बचाव किया। उन्होंने सरकार से कोई मदद नहीं ली। 22 अगस्त 1927 को मुख्य न्यायालय ने एक या दो सजा के अपवाद के साथ मूल निर्णय का समर्थन किया।

18 महीने के लंबे केस में, पं. राम प्रसाद 'बिस्मिल', अशफाक उल्ला खान, ठाकुर रोशन सिंह और राजेंद्र लाहिड़ी को भारतीय दंड संहिता की धारा 121 (ए), 120 (बी), 302 और 396 के तहत मौत की सजा सुनाई गई थी। पं. राम प्रसाद Pras बिस्मिल को ब्रिटिश अधिकारियों ने 19 दिसंबर 1927 को गोरखपुर जेल में, अशफाक उल्लाह खान को फैजाबाद जेल में और ठाकुर रोशन सिंह को नैनी (इलाहाबाद) जेल में फांसी दी थी, जबकि चौथे राजेंद्र लाहिड़ी को 17 दिसंबर 1927 (2) को फांसी दी गई थी गोंडा जेल में निर्धारित तिथि से कुछ दिन पहले) वर्तमान भारतीय राज्य में स्थित है।

उन्होंने वैदिक भजन ''विश्व देवता.....'' का पाठ करके फांसी की रस्सी को धारण किया, और जेल में लिखी अपनी आत्मकथा में अपने अगले जन्म में **''कृणवंतो विश्वमार्यम''** के लिए काम करने की इच्छा व्यक्त की। पं. का शव राम प्रसाद पस बिस्मिल 'को उनके माता–पिता मुरलीधर और मूलमती को सौंप दिया गया।

पूरे देश से लगभग 1.5 लाख लोगों की भारी भीड़ एकत्रित हुई।

वे बिस्मिल के शव को ले गए और एक भव्य जुलूस के तहत राप्ती के तट पर ले गए, जहाँ इस महान शहीद का अंतिम अंतिम संस्कार उचित वैदिक श्मशान प्रणाली के तहत किया गया।

वह स्थान, जहाँ बिस्मिल के अनुष्ठान दायित्वों को सार्वजनिक रूप से राजघाट नाम दिया गया था। इस जगह के साइड बाय एरिया में एक नया ट्रांसपोर्ट नगर विकसित किया गया है।

विश्व पर्यावरण दिवस

विश्व पर्यावरण दिवस प्रत्येक वर्ष 5 जून को बेहतर भविष्य के लिए पर्यावरण को सुरक्षित, स्वस्थ और सुनिश्चित बनाने के लिए नई और प्रभावी योजनाओं को लागू करने के द्वारा पर्यावरण मुद्दों को सुलझाने के लिए मनाया जाता है। इसकी घोषणा 1972 में संयुक्त राष्ट्र महासभा के द्वारा पर्यावरण पर विशेष सम्मेलन "स्टॉकहोम मानव पर्यावरण सम्मेलन" के उद्धघाटन पर हुई थी। यह पूरे संसार के लोगों के बीच में पर्यावरण के बारे में जागरुकता फैलाने के साथ ही पृथ्वी पर साफ और सुन्दर पर्यावरण के सन्दर्भ में सक्रिय गतिविधियों के लिए लोगों को प्रोत्साहित और प्रेरित करने के उद्देश्य से हर साल मनाया जाता है। यह साल के बड़े उत्सव के रुप में बहुत सी तैयारियों के साथ मनाया जाता है, जिसके दौरान राजनीतिक और सार्वजनिक क्रियाओं में वृद्धि होती है।

विश्व पर्यावरण दिवस (डब्ल्यू.ई.डी) की स्थापना इस ग्रह से सभी पर्यावरण संबंधी मुद्दों को हटाने और इस ग्रह को वास्तव में सुन्दर बनाने के लिए विभिन्न योजनाओं, एजेंडों और उद्देश्यों के साथ हुई है। पर्यावरण संबंधी समस्याओं पर ध्यान केन्द्रित करने और पर्यावरण के मुद्दों पर लोगों को एक चेहरा प्रदान करने के लिए पर्यावरण के लिए इस विशेष कार्यक्रम की स्थापना करना आवश्यक था। यह समारोह स्वस्थ्य जीवन के लिए स्वस्थ वातावरण के महत्व को समझने के साथ ही विश्वभर में पर्यावरण के अनुकूल विकास को निश्चित करने के लिए लोगों को सक्रिय प्रतिनिधि के रुप में प्रेरित करने में हमारी मदद करता है। यह लोगों के सामान्य सूझ को फैलाता है कि सभी राष्ट्रों और लोगों के सुरक्षित और अधिक समृद्धशाली भविष्य की उपलब्धता के लिए पर्यावरण मुद्दों के प्रति अपने व्यवहार में बदलाव के लिए यह आवश्यक है।

विश्व पर्यावरण दिवस का संचालन संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (यूएनईपी) के द्वारा किया जाता है। इसका मुख्यालय नैरोबी, केन्या में है, हालांकि, यह विश्वभर के लगभग 100 से भी अधिक देशों में मनाया जाता है। इसकी स्थापना 1972 में हुई थी, तथापि, इसे सबसे पहले वर्ष 1973 में मनाया गया था। इसका सम्मेलन प्रत्येक वर्ष अलग–अलग शहरों के द्वारा (जिसे मेजबान देश भी कहा जाता है) अलग थीम या विषय के साथ किया जाता है। यह लोगों के अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के माध्यम से मनाया जाता है। 2016 के विश्व पर्यावरण दिवस का विषय या थीम "जीवन के लिए वन्यजीवन में गैरकानूनी व्यापार के खिलाफ संघर्ष" था, जिसकी मेजबानी अंगोला देश के द्वारा की गई थी।

इस सम्मेलन का उद्देश्य सभी देशों के लोगों को एक साथ लाकर जलवायु परिवर्तन के साथ मुकाबला करने और जंगलों के प्रबंध को सुधारने के लिए समझौता करना था। यह बहुत सी क्रियाओंय जैसे– वृक्षारोपण, पर्यावरण सुरक्षा से संबंधित विषयों पर विद्यार्थियों के द्वारा सांस्कृतिक कार्यक्रम, कला प्रदर्शनी, चित्रकला प्रतियोगिता, प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता, वाद–विवाद, व्याख्यान, निबंध लेखन, भाषण आदि के साथ मनाया जाता है। युवाओं को पृथ्वी पर सुरक्षित भविष्य के लिए पर्यावरण और जलवायु परिवर्तन के मुद्दों पर प्रोत्साहित करने के लिए (निश्चित योजना प्रबंध के संदर्भ में) कार्यशालाओं का भी आयोजित किया जाता है।

2009 में, चेन्नई और बैंगलोर में पर्यावरण के अनुकूल बुनियादी ढांचे और ग्लोबल वार्मिंग पर अंकुश लगाकर प्राकृतिक संसाधनों की सुरक्षा के लिए कला प्रतियोगिता, विद्यार्थियों के लिए ई–कचरा (ईलक्ट्रोनिक अपशिष्ट) के प्रबंधन के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम, ऊर्जा के स्रोतों का पुनः उपयोग, वन्य जीवन संरक्षण, वर्षा के पानी का संरक्षण,

ग्लोबल वार्मिंग के बढ़ने पर वाद–विवाद प्रतियोगिता, जैविक अपशिष्ट आदि के माध्यम से पर्यावरण मेले का आयोजन किया गया था।

विश्व पर्यावरण दिवस संयुक्त राष्ट्र द्वारा प्रकृति को समर्पित दुनियाभर में मनाया जाने वाला सबसे बड़ा उत्सव है। पर्यावरण और जीवन का अटूट संबंध है फिर भी हमें अलग से यह दिवस मनाकर पर्यावरण के संरक्षण, संवर्धन और विकास का संकल्प लेने की आवश्यकता है। यह बात चिंताजनक ही नहीं, शर्मनाक भी है।
पर्यावरण प्रदूषण की समस्या पर सन् 1972 में संयुक्त राष्ट्र संघ ने स्टॉकहोम (स्वीडन) में विश्व भर के देशों का पहला पर्यावरण सम्मेलन आयोजित किया। इसमें 119 देशों ने भाग लिया और पहली बार एक ही पृथ्वी का सिद्धांत मान्य किया।

इसी सम्मेलन में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (UNEP) का जन्म हुआ तथा प्रति वर्ष 5 जून को पर्यावरण दिवस आयोजित करके नागरिकों को प्रदूषण की समस्या से अवगत कराने का निश्चय किया गया। तथा इसका मुख्य उद्देश्य पर्यावरण के प्रति जागरूकता लाते हुए राजनीतिक चेतना जागृत करना और आम जनता को प्रेरित करना था।

उक्त गोष्ठी में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने 'पर्यावरण की बिगड़ती स्थिति एवं उसका विश्व के भविष्य पर प्रभाव' विषय पर व्याख्यान दिया था। पर्यावरण–सुरक्षा की दिशा में यह भारत का प्रारंभिक कदम था। तभी से हम प्रति वर्ष 5 जून को विश्व पर्यावरण दिवस मनाते आ रहे हैं।

पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 19 नवंबर 1986 से पर्यावरण संरक्षण अधिनियम लागू हुआ। उसके जल, वायु, भूमि– इन तीनों से संबंधित कारक तथा मानव, पौधों, सूक्ष्म जीव, अन्य जीवित पदार्थ आदि पर्यावरण के अंतर्गत आते हैं।

वैदिक राष्ट्र मासिक पत्रिका की विज्ञापन दरें

(1)	अंतिम कलर पेज	–	रु. 20,000/–
(2)	2–3 कलर पेज	–	रु. 15,000/–
(3)	अंदर कलर पेज	–	रु. 10,000/–
(4)	ब्लेक एण्ड व्हाईट फुल पेज	–	रु. 5,000/–
(5)	ब्लेक एण्ड व्हाईट हॉफ 1/2 पेज	–	रु. 3,000/–
(6)	ब्लेक एण्ड व्हाईट क्वार्टर 1/4 पेज	–	रु. 1,500/–
(7)	ब्लेक एण्ड व्हाईट क्वार्टर 1/8 पेज	–	रु. 500/–

चारों वेदों का हिन्दी भाष्य - केवल मात्र 3,100/– रुपए में प्राप्त करें

(1) ऋग्वेद 10,522 मंत्र, (2) यजुर्वेद 1975 मंत्र,

(3) सामवेद 1875 मंत्र (4) अथर्ववेद 5677 मंत्र

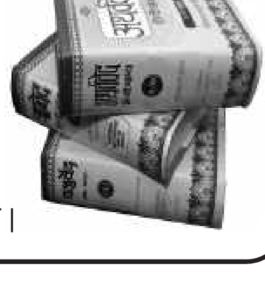

कुल 20,049 मंत्रों का संस्कृत हिन्दी पदार्थ - भावार्थ सहित चारों वेदों को प्राप्त करें।

उधम सिंह

जन्म– 26.12.1899 | बलिदान– 31.07.1940

13 मार्च 1940 की उस शाम लंदन का कैक्सटन हॉल लोगों से खचाखच भरा हुआ था। मौका था ईस्ट इंडिया एसोसिएशन और रॉयल सेंट्रल एशियन सोसायटी की एक बैठक का। हॉल में बैठे कई भारतीयों में एक ऐसा भी था जिसके ओवरकोट में एक मोटी किताब थी। यह किताब एक खास मकसद के साथ यहां लाई गई थी। इसके भीतर के पन्नों को चतुराई से काटकर इसमें एक रिवॉल्वर रख दिया गया था।

13 मार्च 1940 की उस शाम लंदन का कैक्सटन हॉल लोगों से खचाखच भरा हुआ था। मौका था ईस्ट इंडिया एसोसिएशन और रॉयल सेंट्रल एशियन सोसायटी की एक बैठक का। हॉल में बैठे कई भारतीयों में एक ऐसा भी था जिसके ओवरकोट में एक मोटी किताब थी। यह किताब एक खास मकसद के साथ यहां लाई गई थी। इसके भीतर के पन्नों को चतुराई से काटकर इसमें एक रिवॉल्वर रख दिया गया था।

बैठक खत्म हुई। सब लोग अपनी–अपनी जगह से उठकर जाने लगे। इसी दौरान इस भारतीय ने वह किताब खोली और रिवॉल्वर निकालकर बैठक के वक्ताओं में से एक माइकल ओ' डायर पर फायर कर दिया । ड्वॉयर को दो गोलियां लगीं और **पंजाब के इस पूर्व गवर्नर** की मौके पर ही मौत हो गई। हाल में भगदड़ मच गई लेकिन इस भारतीय ने भागने की कोशिश नहीं की। उसे गिरफ्तार कर लिया गया। ब्रिटेन में ही उस पर मुकदमा चला और 31 जुलाई 1940 को उसे फांसी हो गई। इस क्रांतिकारी का नाम उधम सिंह था। इस गोलीकांड का बीज एक दूसरे गोलीकांड से पड़ा था। यह गोलीकांड 13 अप्रैल 1919 को अमृतसर के जलियांवाला बाग में हुआ था। इस दिन अंग्रेज जनरल रेजिनाल्ड एडवार्ड हैरी डायर के हुक्म पर इस बाग में इकट्ठा हुए हजारों लोगों पर गोलियों की बारिश कर दी गई थी बाद में ब्रिटिश सरकार ने जो आंकड़े जारी किए उनके मुताबिक इस घटना में 370 लोग मारे गए थे और 1200 से ज्यादा घायल हुए थे। हालांकि इस आंकड़े को गलत बताते हुए बहुत से लोग मानते हैं कि जनरल डायर की अति ने कम से कम 1000 लोगों की जान ली। ड्वॉयर के पास तब पंजाब के गवर्नर का पद था और इस अधिकारी ने जनरल डायर की कार्रवाई का समर्थन किया था।

इतिहास के पन्नों में जिक्र मिलता है कि उधम सिंह भी उस दिन जलियांवाला बाग में थे। उन्होंने तभी ठान लिया था कि इस नरसंहार का बदला लेना है। मिलते–जुलते नाम के कारण बहुत से लोग मानते हैं कि उधम सिंह ने जनरल डायर को मारा। लेकिन ऐसा नहीं था। इस गोलीकांड को अंजाम देने वाले जनरल डायर की 1927 में ही लकवे और कई दूसरी बीमारियों की वजह से मौत हो चुकी थी। यही वजह है कि इतिहासकारों का एक वर्ग यह भी मानता है कि ड्वायर की हत्या के पीछे उधम सिंह का मकसद जलियांवाला बाग का बदला लेना नहीं बल्कि ब्रिटिश सरकार को एक कड़ा संदेश देना और भारत में क्रांति भड़काना था। उधम सिंह भगत सिंह से बहुत प्रभावित थे। दोनों दोस्त भी थे। एक चिट्ठी में उन्होंने भगत सिंह का जिक्र अपने प्यारे दोस्त की तरह किया है। भगत सिंह से उनकी पहली मुलाकात लाहौर जेल में हुई थी। इन दोनों क्रांतिकारियों की कहानी में बहुत दिलचस्प समानताएं दिखती हैं। दोनों का ताल्लुक पंजाब से था। दोनों ही नास्तिक थे। दोनों हिंदू–मुस्लिम एकता के पैरोकार थे। दोनों की जिंदगी की दिशा तय करने में जलियांवाला बाग कांड की बड़ी भूमिका रही। दोनों को लगभग एक जैसे मामले में सजा हुई। भगत सिंह की तरह उधम सिंह ने भी फांसी से पहले कोई धार्मिक ग्रंथ पढ़ने से इनकार कर दिया था।

उधम सिंह का जन्म 26 दिसंबर 1899 को पंजाब में संगरूर जिले के सुनाम गांव में हुआ था। बचपन में उनका नाम शेर सिंह रखा गया था। छोटी उम्र में में ही माता–पिता का साया उठ जाने से उन्हें और उनके बड़े भाई मुक्तासिंह को अमृतसर के खालसा अनाथालय में शरण लेनी पड़ी। यहीं उन्हें उधम सिंह नाम मिला और उनके भाई को साधु सिंह। 1917 में साधु सिंह भी चल बसे। इन मुश्किलों ने उधम सिंह को दुखी तो किया, लेकिन उनकी हिम्मत और संघर्ष करने की ताकत भी बढ़ाई। 1919 में जब जालियांवाला बाग कांड हुआ तो उन्होंने पढ़ाई जारी रखने के साथ–साथ स्वतंत्रता आंदोलन में कूदने का फैसला कर लिया। तब तक वे मैट्रिक की परीक्षा पास कर चुके थे।

1924 में उधम सिंह गदर पार्टी से जुड़ गए। अमेरिका और कनाडा में रह रहे भारतीयों ने 1913 में इस पार्टी को भारत में क्रांति भड़काने के लिए बनाया था। क्रांति के लिए पैसा जुटाने के मकसद से उधम सिंह ने दक्षिण अफ्रीका, जिम्बाब्वे, ब्राजील और अमेरिका की यात्रा भी की। भगत सिंह के कहने के बाद वे 1927 में भारत लौट आए। अपने साथ वे 25 साथी, कई रिवॉल्वर और गोला–बारूद भी लाए थे। जल्द ही अवैध हथियार और गदर पार्टी के प्रतिबंधित अखबार गदर की गूंज रखने के लिए उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। उन पर मुकदमा चला और उन्हें पांच साल जेल की सजा हुई।

जेल से छूटने के बाद भी पंजाब पुलिस उधम सिंह की कड़ी निगरानी कर रही थी। इसी दौरान वे कश्मीर गए और गायब हो गए। बाद में पता चला कि वे जर्मनी पहुंच चुके है। बाद में उधम सिंह लंदन जा पहुंचे। यहां उन्होंने ड्वॉयर की हत्या का बदला लेने की योजना को अंतिम रूप देना शुरू किया। उन्होंने किराए पर एक घर लिया।

इधर–उधर घूमने के लिए उधम सिंह ने एक कार भी खरीदी। कुछ समय बाद उन्होंने छह गोलियों वाला एक रिवॉल्वर भी हासिल कर लिया। अब उन्हें सही मौके का इंतजार था। इसी दौरान उन्हें 13 मार्च 1940 की बैठक और उसमें ड्वायर के आने की जानकारी हुई। वे वक्त से पहले ही कैक्सटन हाल पहुंच गए और मुफीद जगह पर बैठ गए।

इसके बाद वही हुआ जिसका जिक्र लेख की शुरुआत में हुआ है।

उधम सिंह सर्व धर्म समभाव में यकीन रखते थे और इसीलिए उन्होंने अपना नाम बदलकर मोहम्मद आजाद सिंह रख लिया था जो तीन प्रमुख धर्मों का प्रतीक है। वे न सिर्फ इस नाम से चिट्ठियां लिखते थे बल्कि यह नाम उन्होंने अपनी कलाई पर भी गुदवा लिया था।

देश के बाहर फांसी पाने वाले उधम सिंह दूसरे क्रांतिकारी थे। उनसे पहले मदन लाल ढींगरा को कर्जन वाइली की हत्या के लिए साल 1909 में फांसी दी गई थी। संयोग देखिए कि 31 जुलाई को ही उधम सिंह को फांसी हुई थी और 1974 में इसी तारीख को ब्रिटेन ने इस क्रांतिकारी के अवशेष भारत को सौंपे। उधम सिंह की अस्थियां सम्मान सहित उनके गांव लाई गईं जहां आज उनकी समाधि बनी हुई है।

चित्तरंजन दास

जन्म– 05.11.1870, बलिदान– 16.06.1925

चित्तरंजन दास एक महान स्वतंत्रता सेनानी, राजनीतिज्ञ, वकील तथा पत्रकार थे। उनको सम्मान पूर्वक 'देशबंधु' कहा जाता था। एक महत्वपूर्ण राष्ट्रवादी नेता के साथ–साथ वो एक सफल विधि–शास्त्री भी थे। स्वाधीनता आन्दोलन के दौरान उन्होंने 'अलीपुर षड़यंत्र काण्ड' (1908) के अभियुक्त अरविन्द घोष का बचाव किया था। कई और राष्ट्रवादियों और देशभक्तों की तरह इन्होने भी 'असहयोग आंदोलन' के अवसर पर अपनी वकालत छोड़ दी और अपनी सारी संपत्ति मेडिकल कॉलेज तथा स्त्रियों के अस्पताल को दे डाली। कांग्रेस के अन्दर इनकी महत्वपूर्ण भूमिका रही और वो पार्टी के अध्यक्ष भी रहे। जब कांग्रेस ने इनके 'कौंसिल एंट्री' प्रस्ताव को मानने से इनकार कर दिया तब इन्होने 'स्वराज पार्टी' की स्थापना की।देशबंधु चित्तरंजनदास (1870–1925 ई.) सुप्रसिद्ध भारतीय नेता, राजनीतिज्ञ, वकील, कवि तथा पत्रकार थे। उनके पिता का नाम श्री भुवनमोहन दास था, जो सॉलीसिटर थे और बँगला में कविता भी करते थे।

सन् 1890 ई. में बी.ए. पास करने के बाद चितरंजन दास आइ.सी.एस. होने के लिए इंग्लैंड गए और सन् 1892 ई. में बैरिस्टर होकर स्वदेश लौटे। शुरू में तो वकालत ठीक नहीं चली पर कुछ समय बाद खूब चमकी और इन्होंने अपना तमादी कर्ज भी चुका दिया।

वकालत में इनकी कुशलता का परिचय लोगों को सर्वप्रथम 'वंदेमातरम्' के संपादक श्री अरविंद घोष पर चलाए गए राजद्रोह के मुकदमे में मिला और मानसिकतला बाग षड्यंत्र के मुकदमे ने तो कलकत्ता हाईकोर्ट में इनकी धाक अच्छी तरह जमा दी। इतना ही नहीं, इस मुकदमे में उन्होंने जो निस्स्वार्थ भाव से अथक परिश्रम किया और तेजस्वितापूर्ण वकालत का परिचय दिया उसके कारण समस्त भारतवर्ष में 'राष्ट्रीय वकील' नाम से इनकी ख्याति फैल गई। इस प्रकार के मुकदमों में ये पारिश्रमिक नहीं लेते थे।

इन्होंने सन् 1906 ई. में कांग्रेस में प्रवेश किया। सन् 1917 ई. में ये बंगाल की प्रांतीय राजकीय परिषद् के अध्यक्ष हुए। इसी समय से वे राजनीति में धड़ल्ले से भाग लेने लगे। सन् 1917 ई. के कलकत्ता कांग्रेस के अध्यक्ष का पद श्रीमती एनी बेसंट को दिलाने में इनका प्रमुख हाथ था। इनकी उग्र नीति सहन न होने के कारण इसी साल श्री सुरेंद्रनाथ बनर्जी तथा उनके दल के अन्य लोग कांग्रेस छोड़कर चले गए और अलग से प्रागतिक परिषद् की स्थापना की। सन् 1918 ई. की कांग्रेस में श्रीमती एनी बेसंट के विरोध के बावजूद प्रांतीय स्थानिक शासन का प्रस्ताव इन्होंने मंजूर करा लिया और रौलट कानून का जमकर विरोध किया।

राजनीति में प्रवेश– चित्तरंजन दास ने अपनी चलती हुई वकालत छोड़कर गांधीजी के असहयोग आंदोलन में भाग लिया और पूर्णतया राजनीति में आ गए। उन्होंने विलासी जीवन व्यतीत करना छोड़ दिया और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सिद्धान्तों का प्रचार करते हुए सारे देश का भ्रमण किया। उन्होंने अपनी समस्त सम्पत्ति और विशाल प्रासाद राष्ट्रीय हित में समर्पण कर दिया। वे कलकत्ता के नगर प्रमुख निर्वाचित हुए। उनके साथ सुभाषचन्द्र बोस कलकत्ता निगम के मुख्य कार्याधिकारी नियुक्त हुए।

अध्यक्ष– चित्तरंजन दास सन् 1922 ई. में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष नियुक्त हुए, लेकिन उन्होंने भारतीय शासन विधान के अंतर्गत संवर्द्धित धारासभाओं से अलग रहना ही उचित समझा। इसीलिए उन्होंने मोतीलाल नेहरू और एन. सी. केलकर के सहयोग से 'स्वराज्य पार्टी' की स्थापना की, जिसका उद्देश्य था कि

धारासभाओं में प्रवेश किया जाए और आयरलैण्ड के देशभक्त श्री पार्नेल की कार्यनीति अपनाते हुए 1919 ई. के भारतीय शासन विधान में सुधार करने अथवा उसे नष्ट करने का प्रयत्न किया जाए। यह एक प्रकार से सहयोग की नीति थी।

निधन– बंगाल और बम्बई की धारासभाओं में तो यह इतनी शक्तिशाली हो गई कि वहाँ द्वैध शासन प्रणाली के अंतर्गत मंत्रिमंडल तक का बनना कठिन हो गया। श्री दास के नेतृत्व में स्वराज्य पार्टी ने देश में इतना अधिक प्रभाव बढ़ा लिया कि तत्कालीन भारतमंत्री लार्ड बर्केनहैड के लिए भारत में सांविधानिक सुधारों के लिए चित्तरंजन दास से कोई न कोई समझौता करना जरूरी हो गया लेकिन दुर्भाग्यवश अधिक परिश्रम करने और जेल जीवन की कठिनाइयों को न सह सकने के कारण श्री चित्तरंजन दास बीमार पड़ गए और 16 जून, 1925 ई. को उनका निधन हो गया।

चित्तरंजन दास की विरासत– अपने मृत्यु से कुछ समय पहले देशबंधु ने अपना घर और उसके साथ की जमीन को महिलाओं के उत्थान के लिए राष्ट्र के नाम कर दिया। अब इस प्रांगण में चित्तरंजन राष्ट्रिय कैंसर संस्थान स्थित है। दार्जिलिंग स्थित उनका निवास अब एक मात्री–शिशु संरक्षण केंद्र के रूप में राज्य सरकार द्वारा संचालित किया जाता है। दक्षिण दिल्ली स्थित 'चित्तरंजन पार्क' क्षेत्र में बहुत सारे बंगालियों का निवास है जो बंटवारे के बाद भारत आये थे।

उनके नाम पर देश के विभिन्न स्थानों पर अनेक संस्थानों का नाम रखा गया। इनमे प्रमुख हैं चित्तरंजन अवेन्यू, चित्तरंजन कॉलेज, चित्तरंजन हाई स्कूल, चित्तरंजन लोकोमोटिव वर्क्स, चित्तरंजन नेशनल कैंसर इंस्टिट्यूट, चित्तरंजन पार्क, देशबंधु कॉलेज फॉर गर्ल्स और देशबंधु महाविद्यालय।

एक नजर– इंग्लंड के पार्लमेंट में चित्तरंजन दास ने भारतीय प्रतिनिधी के लिये आयोजित चुनाव के लिये दादाभाई नौरोजी का प्रचार किया जिसमें दादाभाई जित गयें।

इ.स. 1894 में चित्तरंजन दास ने कोलकता उच्च न्यायलय में वकीली की।

इ.स. 1905 में चित्तरंजन दास स्वदेशी मंडलकी स्थापना की।

इ.स. 1909 में अलीपुर बॉम्बे मामले में अरविंद घोष की और से वे न्यायलय में लढे। इसलिये अरविंद घोष निर्दोष छूट पायें।

इ.स. 1914 में 'नारायण' नाम से' बंगाली भाषा का साप्ताहिक उन्होंने शुरु किया।

इ.स. 1917 में बंगाल प्रांतीय राजकीय परिषद के अध्यक्ष थे।

इ.स. 1921 और इ.स. 1922 में अहमदाबाद में भारतीय राष्ट्रीय कॉंग्रेस के अध्यक्ष रहे।

चित्तरंजन दास ने मोतीलाल नेहरू, मदन मोहन मालवीय के साथ स्वराज्य पक्ष की स्थापना की।

'फॉरवर्ड' दैनिक में वो लेख लिखने लगे, उन्होने ही इसका प्रकाशन किया।

इ.स. 1924 में वे कोलकता महापालिका कें अध्यक्ष हुये।

।। ओ३म्।।

www.vaidikrashtra.com

वैदिक राष्ट्र Vaidik Rashtra

ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद अथर्ववेद

वयं राष्ट्रे जागृयाम:

आर्य जगत् के संपूर्ण सामाचार अब एक ही स्थान पर...

आर्य जगत की संस्थाओं, गुरुकुलों, आश्रमों, एवं आर्य समाजों की जानकारी हेतु...

वैदिक विद्वानों के साक्षात्कार, प्रवचन, लेख, ऑडियो एवं वीडियो हेतु...

वैदिक विद्वानों, आर्य धर्माचार्यों (पुरोहित) एवं भजनोंपदेशक के कार्यक्रमों हेतु...

वैदिक पत्र/पत्रिका, प्रकाशक, वैदिक साहित्य एवं वैदिक सिद्धांतों हेतु ....

सर्वजातीय वैवाहिक संबंधों हेतु....

Mob. 9977987777, E-mail: vaidikrashtra@gmail.com

रानी लक्ष्मीबाई

जन्म– 19 नवंबर, 1835 | मृत्यु– 17 जून, 1858

मराठा शासित झाँसी राज्य की रानी और 1857 के प्रथम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की वीरांगना थीं। बलिदानों की धरती भारत में ऐसे–ऐसे वीरों ने जन्म लिया है, जिन्होंने अपने रक्त से देश प्रेम की अमिट गाथाएं लिखीं। यहाँ की ललनाएं भी इस कार्य में कभी किसी से पीछे नहीं रहीं, उन्हीं में से एक का नाम है– झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई। उन्होंने न केवल भारत की बल्कि विश्व की महिलाओं को गौरवान्वित किया। उनका जीवन स्वयं में वीरोचित गुणों से भरपूर, अमर देशभक्ति और बलिदान की एक अनुपम गाथा है।

रानी लक्ष्मीबाई मराठा शासित झांसी की रानी और भारत की स्वतंत्रता संग्राम की प्रथम वनिता थीं। भारत को दासता से मुक्त करने के लिए सन् 1857 में बहुत बड़ा प्रयास हुआ। यह प्रयास इतिहास में भारत का प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम या सिपाही स्वतंत्रता संग्राम कहलाता है।

अंग्रेजों के विरुद्ध रणयज्ञ में अपने प्राणों की आहुति देने वाले योद्धाओं में वीरांगना महारानी लक्ष्मीबाई का नाम सर्वोपरी माना जाता है। 1857 में उन्होंने भारत के स्वतंत्रता संग्राम का सूत्रपात किया था। अपने शौर्य से उन्होंने अंग्रेजों के दाँत खट्टे कर दिए थे।

अंग्रेजों की शक्ति का सामना करने के लिए उन्होंने नये सिरे से सेना का संगठन किया और सुदृढ़ मोर्चाबंदी करके अपने सैन्य कौशल का परिचय दिया था।

जीवन परिचय– मुख्य लेख : रानी लक्ष्मीबाई का जीवन परिचय रानी लक्ष्मीबाई का जन्म 19 नवंबर, 1835 को काशी के पुण्य व पवित्र क्षेत्र असीघाट, वाराणसी में हुआ था। इनके पिता का नाम 'मोरोपंत तांबे' और माता का नाम 'भागीरथी बाई' था। इनका बचपन का नाम 'मणिकर्णिका' रखा गया परन्तु प्यार से मणिकर्णिका को 'मनु' पुकारा जाता था।

मनु की अवस्था अभी चार–पाँच वर्ष ही थी कि उसकी माँ का देहान्त हो गया। पिता मोरोपंत तांबे एक साधारण ब्राह्मण और अंतिम पेशवा बाजीराव द्वितीय के सेवक थे। माता भागीरथी बाई सुशील, चतुर और रूपवती महिला थीं। अपनी माँ की मृत्यु हो जाने पर वह पिता के साथ बिठूर आ गई थीं। यहीं पर उन्होंने मल्लविद्या, घुड़सवारी और शस्त्रविद्याएँ सीखीं। चूँकि घर में मनु की देखभाल के लिए कोई नहीं था इसलिए उनके पिता मोरोपंत मनु को अपने साथ बाजीराव के दरबार में ले जाते थे जहाँ चंचल एवं सुन्दर मनु ने सबका मन मोह लिया था। बाजीराव मनु को प्यार से 'छबीली' बुलाने थे।

मुख्य लेख : झाँसी का युद्ध– उस समय भारत के बड़े भू–भाग पर अंग्रेजों का शासन था। वे झाँसी को अपने अधीन करना चाहते थे। उन्हें यह एक उपयुक्त अवसर लगा। उन्हें लगा रानी लक्ष्मीबाई स्त्री है और हमारा प्रतिरोध नहीं करेगी। उन्होंने रानी के दत्तक–पुत्र को राज्य का उत्तराधिकारी मानने से इंकार कर दिया और रानी को पत्र लिख भेजा कि चूँकि राजा का कोई पुत्र नहीं है, इसीलिए झाँसी पर अब अंग्रेजों का अधिकार होगा। रानी यह सुनकर क्रोध से भर उठीं एवं घोषणा की कि मैं अपनी झाँसी नहीं दूँगी। अंग्रेज तिलमिला उठे। परिणाम स्वरूप अंग्रेजों ने झाँसी पर आक्रमण कर दिया। रानी ने भी युद्ध की पूरी तैयारी की। किले की प्राचीर पर तोपें रखवायीं। रानी ने अपने महल के सोने एवं चाँदी के सामान तोप के गोले बनाने के लिए दे दिया।

मृत्यु– रानी को असहनीय वेदना हो रही थी परन्तु मुखमण्डल दिव्य कान्त से चमक रहा था। उन्होंने एक बार अपने पुत्र को देखा और फिर वे तेजस्वी नेत्र सदा के लिए बन्द हो गए। वह 17 जून, 1858 का दिन था, जब क्रान्ति की यह ज्योति अमर हो गयी। उसी कुटिया में उनकी चिता लगायी गई जिसे उनके पुत्र दामोदर राव ने मुखाग्नि दी। रानी का पार्थिव शरीर पंचमहाभूतों में विलीन हो गया और वे सदा के लिए अमर हो गयीं। इनकी मृत्यु ग्वालियर में हुई थी। रानी लक्ष्मीबाई की वीरता से प्रभावित होकर ह्यूरोज को भी यह कहना पड़ा कि– ''भारतीय क्रांतिकारियों में यह अकेली मर्द है।'' विद्रोही सिपाहियों के सैनिक नेताओं में रानी सबसे श्रेष्ठ और बहादुर थी और उसकी मृत्यु से मध्य भारत में विद्रोह की रीढ़ टूट गई।

सिंहासन हिल उठे राजवंशों ने भृकुटी तानी थी,
बूढ़े भारत में आई फिर से नयी जवानी थी,
गुमी हुई आजादी की कीमत सबने पहचानी थी,
दूर फिरंगी को करने की सबने मन में ठानी थी।
चमक उठी सन सत्तावन में, वह तलवार पुरानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।। –सुभद्रा कुमारी चौहान

अंग्रेजों का जब्ती सिद्धांत मुख्य लेख : अंग्रेजों का जब्ती सिद्धांत झाँसी की रानी, जो इस बात से बहुत कुपित थी कि 1853 ई. में उसके पति के मरने पर लॉर्ड डलहौजी ने जब्ती का सिद्धांत लागू करके उसका राज्य हड़प लिया।

अतएव सिपाही विद्रोह शुरू होने पर वह विद्रोहियों से मिल गई और सर ह्यूरोज के नेतृत्व में अंग्रेजी फौज का डटकर वीरतापूर्वक मुकाबला किया। जब अंग्रेजी फौज किले में घुस गई, लक्ष्मीबाई किले छोड़कर कालपी चली गई और वहाँ से युद्ध जारी रखा। जब कालपी छिन गई तो रानी लक्ष्मीबाई ने तात्या टोपे के सहयोग से शिन्दे की राजधानी ग्वालियर पर हमला बोला, जो अपनी फौज के साथ कम्पनी का वफादार बना हुआ था।

शिवाजी राज अभिषेक

जन्म– 19.02.1630 | बलिदान– 03.04.1680

शिवराज्याभिषेक समारोह को मराठा साम्राज्य के इतिहास का सबसे महत्वपूर्ण और ऐतिहासिक दिन माना जाता है। 1674 में ज्येष्ठ मास के शुक्ल पक्ष की त्रयोदशी को छत्रपति शिवाजी महाराज का करीब 5 हजार फीट की ऊंचाई पर स्थित रायगढ़ किले में राज्याभिषेक किया गया था। जिस सिंहासन पर शिवाजी महाराज को बिठाया गया था उसे 32 मन सोने से मढ़ा गया था। इसी अभिषेक के दौरान उनके सिर पर छत्र धारण कराया गया था, इसी के बाद से वो छत्रपति कहलाए।

इसी दिन उन्होंने औपचारिक तौर पर रायगढ़ की गद्दी संभाली थी. छत्रपति शिवाजी को हिंदू परंपराओं को आगे बढ़ाने के लिए जाना जाता है। उन्होंने फारसी भाषा की जगह मराठी और संस्कृत के प्रयोग पर जोर दिया था। पिता से विरासत में मिली 2 हजार सैनिकों की छोटी सी टुकड़ी को छत्रपति शिवाजी ने 1 लाख सैनिकों की विशाल सेना में बदल दिया था। उनकी सेना गुरिल्ला युद्ध करने में निपुण थी। गुरिल्ला युद्ध को शिवाजी के नाम पर शिव सूत्र भी कहा जाता था। शिवाजी महाराज को दक्षिण भारत में मुगलों का वर्चस्व और घमंड दोनों तोड़ने के लिए भी जाना जाता है।

॥ ओ३म् ॥

रिश्ते सर्वजातीय रिश्ते

सर्व ब्राह्मण, सर्व राजपूत (क्षत्रिय), सर्व वैश्य, अग्रवाल माहेश्वरी, जैन सिक्ख, बौद्ध, गुजराती, महाराष्ट्रीयन पंजाबी, सिंधी, मारवाड़ी, बंगाली, मराठा, यादव, कायस्थ, सोनी, वर्मा, सेन एवं समस्त पिछड़ी जाति, अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (OBC, SC, ST) आदि के (समस्त हिन्दू समाज के) युवक - युवतियाँ अविवाहित, विधवा / विधुर, तलाकशुदा प्रौढ़, विकलांग (अस्थिबाधित, दृष्टिबाधित, मूकबधिर आदि) वैवाहिक रिश्तों हेतु संपर्क कर, परस्पर स्व - स्व (अपने - अपने) गुण, कर्म, स्वभाव का उत्तम चयन कर, दिव्य वैदिक श्रेष्ठतम जीवन को प्राप्त करें।

समस्त हिन्दू समाज के अविवाहित, विधवा / विधुर, तलाकशुदा, विकलांग आदि वैवाहिक संबंधों हेतु बायोडाटा - फोटो भेज कर शीघ्र संपर्क करें।

संपर्क : आर्य समाज मंदिर 219, संचार नगर एक्सटेंशन, कनाड़िया रोड़, इन्दौर (म.प्र.) 452016

मो. 9977957777, 9977987777, www.vedicparinay.com | E-mail: aryasamajindore@yahoo.com

राजमाता जीजाबाई का इतिहास

पूरा नाम	–	जीजाबाई भोंसले
अन्य नाम	–	'जीजाई', 'जीजाऊ', राजमाता जीजाबाई
जन्म	–	12 जनवरी, 1598 ई.
जन्म भूमि	–	सिंधखेड़ राजा, बुलढ़ाणा जिला, महाराष्ट्र
पिता का नाम	–	लखोजीराव जाधव
पति का नाम	–	छत्रपति शाहजीराजे भोंसले
संतान	–	6 बेटियां और 2 बेटे
निधन	–	17 जून 1674

(छत्रपति शिवाजी महाराज के राज्याभिषेक के महज 11 दिन बाद) राजमाता जीजाबाई की जानकारी – Veermata Jijabai Information सच्ची देशभक्त और भारत की वीर माता जीजाबाई (Veermata Jijabai) 12 जनवरी, 1598 को महाराष्ट्र के बुलढाणा जिले के पास निजामशाह के राज्य सिंधखेंड़ में जन्मी थी। उनके पिता का नाम लखुजी जाधवराव था, जो कि निजामशाह के दरबार में पंचहजारी सरदार थे। आपको बता दें कि वे निजाम के नजदीकी सरदारों में से एक थे। जीजाबाई की माता का नाम म्हालसा बाई था। जीजाबाई को बचपन में जीजाऊ नाम से पुकारा जाता था।

उस समय बाल विवाह की प्रथा थी, इसलिए जीजाबाई की भी शादी बेहद कम उम्र में हो गई थी। उनका विवाह शाहजी राजे भोसले के साथ हुआ था। शाहजी राजे भोसले बीजापुर के सुल्तान आदिलशाह के दरबार में सैन्य दल के सेनापति और साहसी योद्दा थे। आपको बता दें कि जीजाबाई उनकी पहली पत्नी थी।

शादी के बाद जीजाबाई और शाहजी भोसले को 8 संताने हुईं, जिनमें से 6 बेटियां और 2 बेटे थे। उनमें से ही एक छत्रपति शिवाजी महाराज भी थे। जो कि जीजाबाई के मार्गदर्शन से आगे चलकर महान मराठा शासक बने, जिन्होंने मराठा स्वराज्य की नींव रखी थी।

एक वीर और आदर्श माता के रुप में जीजाबाई– Jijabai and Shivaji Maharaj

अपनी दूरदर्शिता के लिए मशहूर जीजाबाई एक योद्धा और सशक्त प्रशासक ही नहीं थी, बल्कि वे एक वीर और आदर्श माता भी थी, जिन्होंने अपने पुत्र छत्रपति शिवाजी महाराज की ऐसी परिवरिश की और उनके अंदर ऐसे गुणों का संचार किया, जिसकी वजह से छत्रपति शिवाजी महाराज एक वीर, माहन, साहसी, निर्भीक योद्धा बने।

जीजाबाई ने हिन्दू धर्म के महाकाव्य रामायण और महाभारत की कहानियां सुनाकर शिवाजी में वीरता, धर्मनिष्ठा, धैर्य और मर्यादा आदि गुणों का विकास अच्छे से किया, जिससे शिवाजी के बाल है पर स्वाधीनता की लौ प्रज्वलित शुरु से ही हो गई थी।

इसके साथ ही अपनी देखरेख और मार्गदर्शन में उन्होंने शिवाजी में नैतिक संस्कारों का संचार किया। इसके अलावा उन्हें मानवीय रिश्तों की अहमियत समझाई, महिलाओं का मान–सम्मान करने की शिक्षा दी और उनके अंदर देश प्रेम की भावना जागृत की।

जिसके चलते उनके अंदर महाराष्ट्र की आजादी की प्रवल इच्छा जागृत हुई। यही नहीं वीरमाता जीजाबाई ने अपने वीर पुत्र शिवाजी महाराज से मातृभूमि, गौ, मानव जाति की रक्षा का संकल्प भी लिया। जीजाबाई ने शिवाजी महाराज को तलवारबाजी, भाला चलाने की कला, घुड़सवारी, आत्मरक्षा, युद्ध–कौशल की शिक्षा में निपुण बनाया।

जीजाबाई के दिए हुए इन संस्कारों की वजह से ही शिवाजी महाराज आगे चलकर समाज के संरक्षक और गौरव बने और उन्होंने भारत में हिन्दू स्वराज्य की स्थापना की और एक स्वतंत्र और महान शासक की तरह उन्होंने अपने नाम का सिक्का चलवाया और छत्रपति शिवाजी महाराज के नाम से मशहूर हुए।

वहीं शिवाजी भी अपनी सभी सफलताओं का श्रेय अपनी वीर माता जीजाबाई को देते थे, जो उनके लिए प्रेरणास्रोत थी। जीजाबाई ने अपनी पूरी जिंदगी अपने बेटे को मराठा साम्राज्य का महानतम शासक बनाने पर लगा दी थी।

वीरमाता जीजाबाई का निधन– Jijabai Death

जीजाबाई एक बेहद प्रभावी और बुद्धिमान महिला थी जिन्होनें न सिर्फ मराठा साम्राज्य को स्थापित करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई बल्कि मराठा सम्राज्य की नींव को मजबूती देने में भी अपना विशेष योगदान दिया और अपनी पूरी जिंदगी मराठा साम्राज्य की स्थापना के लिए समर्पित कर दी। वह सच्चे अर्थों में राष्ट्रमाता और ऐसी वीर नारी थी।

जिन्होंने अपने कौशल और प्रतिभा के दम पर अपने पुत्र को सूर्यवीर बना दिया। इस तरह उनका निधन शिवाजी के राज्याभिषेक के कुछ दिनों बाद ही 17 जून, 1674 ई. को हो गया। उनके बाद वीर शिवाजी ने मराठा साम्राज्य का विस्तार दिया।

वहीं वीर माता और राष्ट्रमाता के रूप में उन्हें आज भी याद किया जाता है। उनका जीवन सभी के लिए प्रेरणास्त्रोत हैं, वहीं जीजाबाई की देशभक्ति और उनके शौर्य की जितनी भी तारीफ की जाए उतनी कम है।

॥ ओ३म् ॥

गृह प्रवेश, वास्तु यज्ञ, गायत्री यज्ञ, नाम करण संस्कार, मुण्डन संस्कार, विवाह आदि संस्कारों के लिये संपर्क करें।

आर्य समाज विधि (वैदिक - पद्धति) से प्रमाण - पत्र सहित सजातीय / अंतर्जातीय विवाह - संस्कार करने हेतु मिलें

वैदिक पद्धति से अंत्येष्टि संस्कार निःशुल्क किये जाते है।

आर्य समाज संचार नगर, इन्दौर (म.प्र.) 452016

कार्यालय : आर्य समाज – 219, संचार नगर एक्स, इन्दौर (म.प्र.) 452016

ई-मेल : aryasamajindore@yahoo.com, वेबसाइट : www.vedicparinaya.com

www.indorearyasamaj.com | www.aryasamj.co ✆ 9977 95 7777, 9977 98 7777

नोट – यज्ञ (हवन) से संबंधित हवन पात्र, हवन कुण्ड, हवन सामग्री, हवन समिधा (लकड़िया) एवं वैदिक साहित्य भी उपलब्ध है।

बुन्देलखण्ड का शेर छत्रसाल

जन्म– 04.05.1649 | बलिदान– 20.12.1731

झाँसी के आसपास उत्तर प्रदेश और मध्यप्रदेश की विशाल सीमाओं में फैली बुन्देलखण्ड की वीर भूमि में तीन जून, 1649 (ज्येष्ठ शुक्ल 3, विक्रम संवत 1706) को चम्पतराय और लालकुँवर के घर में छत्रसाल का जन्म हुआ था। चम्पतराय सदा अपने क्षेत्र से मुगलों को खदेड़ने के प्रयास में लगे रहते थे। अतः छत्रसाल पर भी बचपन से इसी प्रकार के संस्कार पड़ गये।

जब छत्रसाल केवल 12 साल के थे, तो वह अपने मित्रों के साथ विन्ध्यवासिनी देवी की पूजा के लिए जा रहे थे। रास्ते में कुछ मुस्लिम सैनिकों ने उनसे मन्दिर का रास्ता जानना चाहा। छत्रसाल ने पूछा कि क्या आप लोग भी देवी माँ की पूजा करने जा रहे हैं ?

उनमें से एक क्रूरता से हँसते हुए बोला– नहीं, हम तो मन्दिर तोड़ने जा रहे हैं। यह सुनते ही छत्रसाल ने अपनी तलवार उसके पेट में घोंप दी। उसके साथी भी कम नहीं थे। बात की बात में सबने उन दुष्टों को यमलोक पहुँचा दिया।

बुन्देलखण्ड के अधिकांश राजा और जागीरदार मुगलों के दरबार में हाजिरी बजाते थे। वे अपनी कन्याएँ उनके हरम में देकर स्वयं को धन्य समझते थे।

उनसे किसी प्रकार की आशा करना व्यर्थ था। एकमात्र शिवाजी ही मुगलों से टक्कर ले रहे थे। छत्रसाल को पता लगा कि औरंगजेब के आदेश पर मिर्जा राजा जयसिंह शिवाजी को पकड़ने जा रहे हैं, तो वे जयसिंह की सेना में भर्ती हो गये और मुगल सेना की कार्यशैली का अच्छा अध्ययन किया। जब शिवाजी आगरा जेल से निकलकर वापस रायगढ़ पहुँचे, तो छत्रसाल ने उनसे भेंट की।

शिवाजी के आदेश पर फिर से बुन्देलखण्ड आकर उन्होंने अनेक जागीरदारों और जनजातियों के प्रमुखों से सम्पर्क बढ़ाया और अपनी सेना में वृद्धि की। अब उन्होंने मुगलों से अनेक किले और शस्त्रास्त्र छीन लिये। यह सुनकर बड़ी संख्या में नवयुवक उनके साथ आ गये।

उधर औरंगजेब को जब यह पता लगा, तो उसने रोहिल्ला खाँ और फिर तहव्वर खाँ को भेजा; पर हर बार उन्हें पराजय ही हाथ लगी। छत्रसाल के दो भाई रतनशाह और अंगद भी वापस अपने भाई के साथ आ गये। अब छत्रसाल ने दक्षिण की ओर से जाने वाले मुगलों के खजाने को लूटना शुरू किया। इस धन से उन्होंने अपनी सैन्य शक्ति में वृद्धि की।

एक बार छत्रसाल शिकार के लिए जंगल में घूम रहे थे, तो उनकी स्वामी प्राणनाथ से भेंट हुई। स्वामी जी के मार्गदर्शन में छत्रसाल की गतिविधियाँ और बढ़ गयीं। विजयादशमी पर स्वामी जी ने छत्रसाल का राजतिलक कर उसे'राजाधिराज' की उपाधि दी।

एक बार मुगलों की शह पर हिरदेशाह, जगतपाल और मोहम्मद खाँ बंगश ने बुन्देलखण्ड पर तीन ओर से हमला कर दिया। वीर छत्रसाल की अवस्था उस समय 80 वर्ष की थी। उन्हें शिवाजी का वचन याद आया कि संकट के समय में हम तुम्हारी सहायता अवश्य करेंगे।

इसे याद कर छत्रसाल ने मराठा सरदार बाजीराव पेशवा को सन्देश भेजा। सन्देश मिलते ही बाजीराव ने तुरन्त ही वहाँ पहुँचकर मुगल सेना को खदेड़ दिया। इस प्रकार छत्रसाल ने जीवन भर मुगलों को चैन नहीं लेने दिया।

जिन महाकवि भूषण ने छत्रपति शिवाजी की स्तुति में 'शिवा बावनी' लिखी, उन्होंने ही 'छत्रसाल दशक' में आठ छन्दों में छत्रसाल की वीरता और शौर्य का वर्णन किया है। आज भी बुन्देलखण्ड के घर–घर में लोग अन्य देवी देवताओं के साथ छत्रसाल को याद करते हैं। – छत्रसाल महाबली, करियों भली–भली।।

(कवि भूषण ने महाराज छत्रसाल की प्रशंसा में 'छत्रसाल दशक' की रचना की थी । यह कविता उसी का अंश है। इन पंक्तियों में युद्धरत छत्रसाल की तलवार और बरछी के पराक्रम का वर्णन किया है।)

निकसत म्यान तें मयूखें प्रलैभानु कैसी, फारैं तमतोम से गयंदन के जाल कों।
लागति लपटि कंठ बैरिन के नागिनी सी, रुद्रहिं रिझावै दै दै मुंडन के माल कों।
लाल छितिपाल छत्रसाल महाबाहु बली, कहाँ लौं बखान करों तेरी कलवार कों।
प्रतिभट कटक कटीले केते काटि काटि, कालिका सी किलकि कलेऊ देति काल कों।
भुज भुजगेस की वै संगिनी भुजंगिनी– सी, खेदि खेदि खाती दीह दारुन दलन के।
बखतर पाखरन बीच धँसि जाति मीन, पैरि पार जात परवाह ज्यों जलन के।
रैयाराव चम्पति के छत्रसाल महाराज, भूषन सकै करि बखान को बलन के।
पच्छी पर छीने ऐसे परे पर छीने वीर, तेरी बरछी ने बर छीने हैं खलन के।

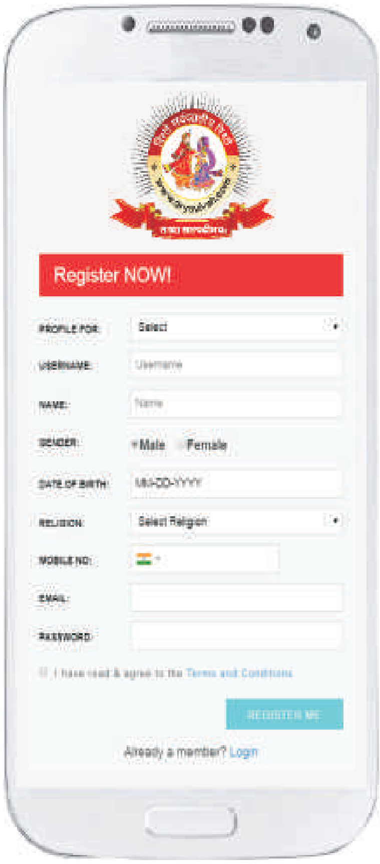

रिश्ते सर्वजातीय रिश्ते

अविवाहित, विधवा/विधुर, तलाकशुदा, प्रौढ़ आदि प्रत्याशी

GET IT ON Google Play

गूगल प्ले स्टोर पर जाकर

aryavivah

App Download करें

Mob. 9977987777

भारतीय इतिहास के साथ एक सुनियोजित खिलवाड़

(6 जून 1674 को वीर छत्रपति शिवाजी का राज्याभिषेक हुआ था। शिवाजी के सिंहासन आरोहण का प्रभाव अगली एक शताब्दी तक हम पूरे भारत में देखते है जब मराठा शक्ति पूरे भारत पर छा गई। आज शिवाजी महाराज के राज्याभिषेक के उपलक्ष में यह ऐतिहासिक लेख प्रकाशित किया जा रहा हैं। –डॉ विवेक आर्य)

भारतीय इतिहास की पाठय पुस्तकों में औरंगजेब और शिवाजी के संघर्ष के पश्चात चुनिन्दा घटनाओं को ही प्राथमिकता से बताया जाता हैं जैसे की नादिर शाह और अहमद शाह अब्दाली द्वारा भारत पर आक्रमण करना, प्लासी की लड़ाई में सिराज–उद–दौलाह की हार और अंग्रेजो का बंगाल पर राज होना और मराठों की पानीपत के युद्ध में हार होना।

उसके पश्चात टीपू सुल्तान की हार, सिखों का उदय और अस्त से १८५७ के संघर्ष तक वर्णन मिलता हैं। एक प्रश्न उठता हैं की इतिहास के इस लंबे १०० वर्ष के समय में भारत के असली शासक कौन थे?

शक्तिहीन मुग़ल तो दिल्ली के नाममात्र के शासक थे परन्तु उस काल का अगर कोई असली शासक था, तो वह थे मराठे। शिवाजी महाराज द्वारा देश,धर्म और जाति की रक्षा के लिए जो अग्नि महाराष्ट्र से प्रज्जल्वित हुई थी उसकी सीमाएँ महाराष्ट्र के बाहर फैल कर देश की सीमाओं तक पहुँच गई थी।

इतिहास के सबसे रोचक इस स्वर्णिम सत्य को देखिये की जिस मतान्ध औरंगजेब ने वीर शिवाजी महाराज को पहाड़ी चूहा कहता था उन्ही शिवाजी के वंशजों को उसी औरंगजेब के वंशजों ने "महाराजधिराज "और "वज़ीरे मुतालिक" के पद से सुशोभित किया था। जिस सिंध नदी के तट पर आखिरी हिन्दू राजा पृथ्वी राज चौहान के घोड़े पहुँचे थे उसी सिंध नदी पर कई शताब्दियों के बाद अगर भगवा ध्वज लेकर कोई पहुँचा तो वह मराठा घोड़ा था।

सिंध के किनारों से लेकर मदुरै तक, कोंकण से लेकर बंगाल तक मराठा सरदार सभी प्रान्तों से चौथ के रूप में कर वसूल करते थे, स्थान स्थान पर अपने विरुद्ध उठ रहे विद्रोहों को दबाते थे, जंजीरा के सिद्दियों को हिन्दू मंदिरो को भ्रष्ट करने का दंड देते थे, पुर्तगालियों द्वारा हिन्दुओं को जबरदस्ती ईसाई बनाने पर उन्हें यथायोग्य दंड देते थे, अंग्रेज सरकार जो अपने आपको अजेय और विश्व विजेता समझती थी मराठों को समुद्री व्यापार करने के लिए टैक्स लेते थे, देश में स्थान स्थान पर हिन्दू तीर्थों और मन्दिरों का पुनरुद्धार करते थे जिन्हें मुसलमानों ने नष्ट कर दिया था, जबरन मुस्लमान बनाये गए हिन्दुओं को फिर से शुद्ध कर हिन्दू बनाते थे । मराठों के राज में सम्पूर्ण आर्यावृत राष्ट्र में फिर से भगवा झन्डा लहराता था और वेद, गौ और ब्राह्मण की रक्षा होती थी।

अंग्रेज लेखक और उनके मानसिक गुलाम साम्यवादीलेखकों द्वारा एक शताब्दी से भी अधिक के स्वर्णिम राज को पाठ्य पुस्तकों में न लिखा जाना इतिहास के साथ खिलवाड़ नहीं तो और क्या हैं।

हम न भूले की "जो राष्ट्र अपने प्राचीन गौरव को भुला देता हैं, वह अपनी राष्ट्रीयता के आधार स्तम्भ को खो देता हैं।" उलटी गंगा बहा दी– वीर शिवाजी का जन्म १६२७ में हुआ था।

उनके काल में देश के हर भाग में मुसलमानों का ही राज्य था। यदा कदा कोई हिन्दू राजा संघर्ष करता तो उसकी हार, उसी की कौम के किसी विश्वासघाती के कारण हो जाती, हिन्दू मंदिरों को भ्रष्ट कर दिया जाता, उनमें गाय की कुरबानी देकर हिन्दुओं को नीचा दिखाया जाता था।

हिन्दुओं की लड़कियों को उठा कर अपने हरम की शोभा बढ़ाना अपने आपको धार्मिक सिद्ध करने के समान था। ऐसे अत्याचारी परिवेश में वीर शिवाजी का संघर्ष हिन्दुओं के लिए एक वरदान से कम नहीं था। हिन्दू जनता के कान सदियों से यह सुनने के लिए थक गए थे की किसी हिन्दू ने मुसलमान पर विजय प्राप्त की।

१६४२ से शिवाजी ने बीजापुर सल्तनत के किलो पर अधिकार करना आरंभ कर दिया। कुछ ही वर्षों में उन्होंने मुग़ल किलो को अपनी तलवार का निशाना बनाया। औरंगजेब ने शिवाजी को परास्त करने के लिए अपने बड़े बड़े सरदार भेजे पर सभी नाकामयाब रहे। आखिर में धोखे से शिवाजी को आगरा बुलाकर कैद कर लिया जहाँ पर अपनी चतुराई से शिवाजी बच निकले। औरंगजेब पछताने के सिवाय कुछ न कर सका। शिवाजी ने मराठा हिन्दू राज्य की स्थापना की और अपने आपको छत्रपति से सुशोभित किया।

शिवाजी की अकाल मृत्यु से उनका राज्य महाराष्ट्र तक ही फैल सका था। उनके पुत्र शम्भा जी में चाहे कितनी भी कमियां हो पर अपने बलिदान से शम्भा जी ने अपने सभी पाप धो डाले। औरंगजेब ने शम्भा जी के आगे दो ही विकल्प रखे थे या तो मृत्यु का वरण कर ले अथवा इस्लाम को ग्रहण कर ले। वीर शिवाजी के पुत्र ने भयंकर अत्याचार सह कर मृत्यु का वरण कर लिया पर इस्लाम को ग्रहण कर अपनी आत्मा से दगाबाजी नहीं की और हिन्दू स्वतंत्रता रुपी वृक्ष को अपने रुधिर से सींच कर और हरा भरा कर दिया। शिवाजी की मृत्यु के पश्चात औरंगजेब ने सोचा की मराठो के राज्य को नष्ट कर दे परन्तु मराठों ने वह आदर्श प्रस्तुत किया जिसे हिन्दू जाति को सख्त आवश्यकता थी। उन्होंने किले आदि त्याग कर पहाड़ों और जंगलों की राह ली। संसार में पहली बार मराठों ने छापामार युद्ध को आरंभ किया। जंगलों में से मराठे वीर गति से आते और भयंकर मार काट कर, मुगलों के शिविर को लूट कर वापिस जंगलों में भाग जाते।

शराब–शबाब की शौकीन आरामपस्त मुग़ल सेना इस प्रकार के युद्ध के लिए कही से भी तैयार नहीं थी। दक्कन में मराठों से २० वर्षों के युद्ध में औरंगजेब बुढ़ा होकर निराश हो विश्वासपात्र गया, करीब ३ लाख की उसकी सेना काल की ग्रास बन गई। उसके सभी विश्वास पात्र सरदार या तो मर गए अथवा बूढ़े हो गए पर वह मराठों के छापा मार युद्ध से पार न पा सका। पाठक मराठों की विजय का इसी से अंदाजा लगा सकते हैं की औरंगजेब ने जितनी संगठित फौज शिवाजी के छोटे से असंगठित राज्य को जितने में लगा दी थी उतनी फौज में तो उससे १० गुना बड़े संगठित राज्य को जीता जा सकता था।

अंत में औरंगजेब की भी १७०५ में मृत्यु हो गई परन्तु तक तक पंजाब में सिख, राजस्थान में राजपूत, बुंदेलखंड में छत्रसाल, मथुरा, भरतपुर में जाटों आदि ने मुगलिया सल्तनत की ईट से ईट बजा दी थी। मराठों द्वारा औरंगजेब को दक्कन में उलझाने से मुगलिया सल्तनत इतनी कमजोर हो गई की बाद में उसके उतराधिकारियों की आपसी लड़ाई के कारण ताश के पत्तों के समान वह ढह गई। इस उलटी गंगा बहाने का सारा श्रेय वीर शिवाजी को जाता हैं।

स्वार्थ से बड़ा जाति अभिमान– इतिहास इस बात का गवाह हैं की मुगलों का भारत में राज हिन्दुओं की एकता में कमी होने के कारण ही स्थापित हो सका था।

अकबर के काल से ही हिन्दू राजपूत एक ओर अपने ही देशवासियों से, अपनी ही कौम से अकबर के लिए लड़ रहे थे वही दूसरी और अपनी बेटियों की डोलियों को मुगल हरमों में भेज रहे थे। औरंगजेब ने जीवन की सबसे बड़ी गलती यही की कि उसने काफ़िर समझ कर राजपूतों का अपमान करना आरंभ कर दिया जिससे न केवल उसकी शक्ति कम हो गई अपितु उसकी सल्तनत में चारों और से विरोध आरंभ हो गया। भातृत्व की भावना को पनपने का मौका मिला और भाई ने भाई को अपने स्वार्थ और परस्पर मतभेद को त्याग कर गले से लगाया।

शिवाजी के पुत्र राजाराम के नेतृत्व में मराठों ने जिनजी के किले से संघर्ष आरंभ कर दिया था। मराठों के सेनापति खान्डोबलाल ने उन मराठा सरदारों को जो कभी जिनजी के किले को घेरने में मुगलों का साथ दे रहे थे अपनी और मिलाना आरंभ कर दिया। नागोजी राणे को पत्र लिख कर समझाया गया की वे मुगलों का साथ न देकर अपनों का साथ दे जिससे देश धर्म और जाति का कल्याण हो सके। नागोजी ने उनकी प्रार्थना को स्वीकार किया और अपने ५,००० आदमियों को साथ लेकर वे मराठा खेमे में आ मिले।

अगला लक्ष्य शिरका था जो अभी भी मुगलों की चाकरी कर रहा था। शिरका ने अपने अतीत को याद करते हुए राजाराम के उस फैसले को याद दिलाया जब राजाराम ने यह आदेश जारी किया था की जहाँ भी कोई शिरका मिले उसे मार डालो। शिरका ने यह भी कहा की राजाराम क्या वह तो उस दिन की प्रतीक्षा कर रहा हैं जब पूरा भोंसले खानदान मृत्यु को प्राप्त होगा तभी उसे शांति मिलेगी। खान्डोबलाल शिरका के उत्तर को पाकर तनिक भी हतोत्साहित नहीं हुआ। उन्होंने शिरका को पत्र लिखकर कहा की यह समय परस्पर मतभेदों को प्रदर्शित करने का नहीं हैं। मेरे भी परिवार के तीन सदस्यों को राजाराम ने हाथी के तले कुचलवा दिया था। मैं राजाराम के लिए नहीं अपितु हिन्दू स्वराज्य के लिए संघर्ष कर रहा हूँ। इस पत्र से शिरका क ह्रदय द्रवित हो गया और उसके भीतर हिन्दू स्वाभिमान जाग उठा। उसने मराठों का हरसंभव साथ दिया और मुगलों के घेरे से राजाराम को छुड़वा कर सुरक्षित महाराष्ट्र पहुँचा दिया।

काश अगर जयचंद से यही शिक्षा मुहम्मद गोरी के आक्रमण के समय ले ली होती तो भारत से पृथ्वी राज चौहान के हिन्दू राज्य का कभी अस्त न होता।

महाराष्ट्र से भारत के कोने कोने तक– मराठों ने मराठा संघ की स्थापना कर महाराष्ट्र के सभी सरदारों को एक तार में बांध कर, अपने सभी मतभेदों को भुला कर, संगठित हो अपनी शक्ति का पुनः निर्माण किया जो शिवाजी महाराज की मृत्यु के बाद लुप्त सी हो गई थी। इसी शक्ति से मराठा वीर सम्पूर्ण भारत पर छाने लगे। महाराष्ट्र से तो मुगलों को पहले ही उखाड़ दिया गया था। अब शेष भारत की बारी थी। सबसे पहले निज़ाम के होश ठिकाने लगाकर मराठा वीरों ने बची हुई चौथ और सरदेशमुखी की राशी को वसूला गया। दिल्ली में अधिकार को लेकर छिड़े संघर्ष में मराठों ने सैयद बंधुओं का साथ दिया। ७०,००० की मराठा फौज को लेकर हिन्दू वीर दिल्ली पहुँच गये। इससे दिल्ली के मुसलमान क्रोध में आ गये। इस मदद के बदले मराठों को सम्पूर्ण दक्षिण भारत से चौथ और सरदेशमुखी वसूलने का अधिकार मिल गया।

मालवा के हिन्दू वीरों ने जय सिंह के नेतृत्व में मराठों को मुगलों के राज से छुड़वाने के लिए प्रार्थना भेजी क्यूंकि उस काल में केवल मराठा शक्ति ही मुगलों के आतंक से देश को स्वतंत्र करवा सकती थी। मराठा वीरों की ७०,००० की फौज ने मुगलों को हरा कर भगवा झंडे से पूरे प्रान्त को रंग दिया।

बुंदेलखंड में वीर छत्रसाल ने अपने स्वतंत्र राज्य की स्थापना की थी। शिवाजी और उनके गुरु रामदास को वे अपना आदर्श मानते थे। वृद्धावस्था में उनके छोटे से राज्य पर मुगलों ने हमला कर दिया जिससे उन्हें राजधानी त्याग कर जंगलों की शरण लेनी पड़ी।इस विपत्ति काल में वीर छत्रसाल ने मराठों को सहयोग के लिए आमंत्रित किया। मराठों ने वर्षा ऋृतु होते हुए भी आराम कर रही मुग़ल सेना पर धावा बोल दिया और उन्हें मार भगाया। वीर छत्रसाल ने अपनी राजधानी में फिर से प्रवेश किया। मराठों के सहयोग से आप इतने प्रसन्न हुए की आपने बाजीराव को अपना तीसरा पुत्र बना लिया और उनकी मृत्यु के पश्चात उनके राज्य का तीसरा भाग बाजीराव को मिला।

इसके पश्चात गुजरात की और मराठा सेना पहुँच गई। मुगलों ने अभय सिंह को मराठों से युद्ध लड़ने के लिये भेजा। उसने एक स्थान पर धोखे से मराठा सरदार की हत्या तक कर दी पर मराठा कहाँ मानने वाले थे। उन्होंने युद्ध में जो जोहर दिखाए की मराठा तलवार की धाक सभी और जम गई। इधर दामा जी गायकवाड़ ने अभय सिंह के जोधपुर पर हमला कर दिया जिसके कारण उसे वापिस लौटना पड़ा। मराठों ने बरोडा और अहमदाबाद पर कब्ज़ा कर लिया।

दक्षिण में अरकाट में हिन्दू राज को गद्दी से उतर कर एक मुस्लिम वह का नवाब बन गया था। हिन्दू राजा के मदद मांगने पर मराठों ने वहाँ पर आक्रमण कर दिया और मुस्लिम नवाब पर विजय प्राप्त की। मराठों को वहाँ से एक करोड़ रुपया प्राप्त हुआ।

इससे मराठों का कार्य क्षेत्र दक्षिण तक फैल गया। इसी प्रकार बंगाल में भी गंगा के पश्चिमी तट तक मराठों का विजय अभियान जारी रहा एवं बंगाल से भी उचित राशी वसूल कर मराठे अपने घर लौटे। मैसूर में भी पहले हैदर अली और बाद में टीपू सुल्तान से मराठों ने चौथ वूसली की थी।

दिल्ली के कागज़ी बादशाह ने फिर से मराठों का विरोध करना आरंभ कर दिया। बाजीराव ने मराठों की फौज को जैसे ही दिल्ली भेजा उनके किलों की नीवें मराठा सैनिकों की पदचाप से हिलने लगी। आखिर में अपनी भूल और प्रायश्चित करके मराठा क्षत्रियों से उन्होंने पीछा छुड़ाया। अहमद शाह अब्दाली से युद्ध के काल में ही मराठा उसका पीछा करते हुए सिंध नदी तक पहुँच गये थे।

पंजाब की सीमा पर कई शताब्दियों के मुस्लिम शासन के पश्चात मराठा घोड़े सिंध नदी तक पहुँच पाए थे। मराठों के इस प्रयास से एवं पंजाब में मुस्लिम शासन के कमजोर होने से सिख सत्ता को अपनी उन्नति करने का यथोचित अवसर मिला जिसका परिणाम आगे महाराजा रंजित सिंह का राज्य था। इस प्रकार सिंध के किनारों से लेकर मदुरै तक, कोंकण से लेकर बंगाल तक मराठा सरदार सभी प्रान्तों से चौथ के रूप में कर वसूल करते थे, स्थान स्थान पर अपने विरुद्ध उठ रहे विद्रोहों को दबाते थे और भगवा पताका को फहरा कर हिन्दू पद पादशाही को स्थिर कर रहे थे। इन सब प्रमाणों से यह सिद्ध होता हैं की करीब एक शताब्दी तक मराठों का भारत देश पर राज रहा जोकि विशुद्ध हिन्दू राज्य था।

थल से जल तक– वीर शिवाजी के समय सही मराठा फौज अपनी जल सेना को मजबूत करने में लगी हुई थी। इस कार्य का नेतृत्व कान्होजी आंग्रे के कुशल हाथों में था। कान्होजी को जंजिरा के मुस्लिम सिद्दी, गोआ के पुर्तगाली, बम्बई के अंग्रेज और डच लोगों का सामना करना पड़ता था जिसके लिए उन्होंने बड़ी फौज की भर्ती की थी। इस फौज के रख रखाव के लियी आप उस रास्ते से आने जाने वाले सभी व्यापारी जहाजों से कर लेते थे। अंग्रेज यही काम सदा से करते आये थे इसलिए उन्हें यह कैसे सहन होता। बम्बई के समुद्र तट से १६ मील की दूरी पर खाण्डेरी द्वीप पर मराठों का सशक्त किला था।

इतिहासकार कान्होजी आंग्रे को समुद्री डाकू के रूप में लिखते हैं जबकि वे कुशल सेनानायक थे। १७१७ में बून चार्ल्स बम्बई का गवर्नर बन कर आया। उसने मराठों से टक्कर लेने की सोची। उसने जहाजों का बड़ा बेड़ा और पैदल सेना तैयार कर मराठों के समुद्री दुर्ग पर हमला कर दिया। अंग्रेजों ने अपने जहाजों के नाम भी रिवेंज,विक्ट्री,हॉक और हंटर आदि रखे थे। पूरी तैयारी के साथ अंग्रेजों ने मराठों के दुर्ग पर हमला किया पर मराठों के दुर्ग कोई मोम के थोड़े ही बने थे। अंग्रेजों को मुँह की खानी पड़ी। अगले साल फिर हमला किया फिर मुँह की खानी पड़ी। तंग आकर इंग्लैंड के महाराजा ने कोमोडोर मैथयू के नेतृत्व में एक बड़ा बेड़ा मराठों से लड़ने के लिए भेजा। इस बार पुर्तगाल की सेना को भी साथ में ले लिया गया। बड़ा भयानक युद्ध हुआ।

कोमोडोर मैथयू स्वयं आगे बढ़ बढ़ कर नेतृत्व कर रहा था। मराठा सैनिक ने उसकी जांघ में संगीन घुसेड़ दी, उसने दो गोलियाँ भी चलाई पर वह खाली गई क्यूंकि मराठों के आतंक और जल्दबाजी में वह उसमें बारूद ही भरना भूल गया। अंत में अंग्रेजों और पुर्तगालियों की संयुक्त सेना की हार हुई। दोनो एक दूसरे को कोसते हुए वापिस चले गए। डच लोगों के साथ युद्ध में भी उनकी यही गति बनी। मराठे थल से लेकर जल तक के राजा थे।

ब्रह्मेन्द्र स्वामी और सिद्दी मुसलमानों का अत्याचार– ब्रह्मेन्द्र स्वामी को महाराष्ट्र में वही स्थान प्राप्त था जो स्थान शिवाजी के काल में समर्थ गुरु रामदास को प्राप्त था। सिद्दी कोंकण में राज करते थे मराठों के विरुद्ध पुर्तगालीयों, अंग्रेजों और डच आदि की सहायता से उनके इलाकों पर हमले करते थे। इसके अलावा उनका एक पेशा निर्दयता से हिन्दू लड़के और लड़कियों को उठा कर ले जाना और मुसलमान बनाना भी था। इसी सन्दर्भ में सिद्दी लोगों ने भगवान परशुराम के मंदिर को तोड़ डाला। यह मंदिर ब्रह्मेन्द्र स्वामी को बहुत प्रिय था।

उन्होंने निश्चय किया की वह कोंकण देश में जब तक वापिस नहीं आयेंगे जब तक उनके पीछे अत्याचारी मलेच्छ को दंड देने वाली हिन्दू सेना नहीं होगी क्यूंकि सिद्दी लोगों ने मंदिर और ब्राह्मण का अपमान किया हैं। स्वामी जी वहाँ से सतारा चले गए और अपने शिष्यों शाहू जी और बाजीराव को पत्र लिख कर अपने संकल्प की याद दिलवाते रहे। मराठे उचित अवसर की प्रतीक्षा करने लगे। सिद्दी लोगों का आपसी युद्ध छिड़ गया, बस मराठे तो इसी की प्रतीक्षा में थे। उन्होंने उसी समय सिद्दियों पर आक्रमण कर दिया। जल में जंजिरा के समीप सिद्दियों के बेड़े पर आक्रमण किया गया और थल पर उनकी सेना पर आक्रमण किया गया। मराठों की शानदार विजय हुई और कोंकण प्रदेश मराठा गणराज्य का भाग बन गया। ब्रह्मेन्द्र स्वामी ने प्राचीन ब्राह्मणों के समान क्षत्रियों की पीठ थप–थपा कर अपने कर्तव्य का निर्वाहन किया था। वैदिक संस्कृति ऐसे ही ब्राह्मणों की त्याग और तपस्या के कारण प्राचीन काल से सुरक्षित रही हैं।

गोआ में पुर्तगाली अत्याचार– गोआ में पुर्तगाली सत्ता ने भी धार्मिक मतान्धता में कोई कसर न छोड़ी थी। हिन्दू जनता को ईसाई बनाने के लिए दमन की निति का प्रयोग किया गया था। हिन्दू जनता को अपने उत्सव बनाने की मनाही थी। हिन्दुओं के गाँव के गाँव ईसाई न बनने के कारण नष्ट कर दिए गये थे। सबसे अधिक अत्याचार ब्राह्मणों पर किया गया था। सैकड़ों मंदिरों को तोड़ कर गिरिजाघर बना दिया गया था। कोंकण प्रदेश में भी पुर्तगाली ऐसे ही अत्याचार करने लगे थे।ऐसे में वह की हिन्दू जनता ने तंग आकर बाजीराव से गुप्त पत्र व्यवहार आरंभ किया और गोवा के हालात से उन्हें अवगत करवाया। मराठों ने कोंकण में बड़ी सेना एकत्र कर ली और समय पाकर पुर्तगालियों पर आक्रमण कर दिया। उनके एक एक कर कई किलों पर मराठों का अधिकार हो गया। पुर्तगाल से अंटोनियो के नेतृत्व में बेड़ा लड़ने आया पर मराठों के सामने उसकी एक न चली। वसीन के किले के चारों और मराठों ने चिम्मा जी अप्पा के नेतृत्व में घेरा दाल दिया था। वह घेरा कई दिनों तक पड़ा रहा था। अंत में आवेश में आकार अप्पा जी ने कहा की तुम लोग अगर मुझे किले में जीते जी नहीं ले जा सकते तो कल मेरे सर को तोप से बांध कर उसे किले की दिवार पर फेंक देना कम से कम मरने के बाद तो मैं किले मैं प्रवेश कर सकूँगा। वीर सेनापति के इस आवाहन से सेना में अद्वितीय जोश भर गया और अगले दिन अपनी जान की परवाह न कर मराठों ने जो हमला बोला की पुर्तगाल की सेना के पाँव ही उखड़ गए और किला मराठों के हाथ में आ गया। यह आक्रमण गोआ तक फैल जाता पर तभी उत्तर भारत पर नादिर शाह के आक्रमण की खबर मिली। उस काल में केवल मराठा संघ ही ऐसी शक्ति थी जो इस प्रकार की इस राष्ट्रीय विपदा का प्रतिउत्तर दे सकती थी। नादिर शाह ने दिल्ली पर आक्रमण कर १५,००० मुसलमानों को अपनी तलवार का शिकार बनाया। उसका मराठा पेशवा बाजीराव से पत्र व्यवहार आरंभ हुआ। जैसे ही उसे सुचना मिली की मराठा सरदार बड़ी फौज लेकर उससे मिलने आ रहे हैं वह दिल्ली को लुटकर ,मुगलों के सिंहासन को उठा कर अपने देश वापिस चला गया।

पहाड़ी चूहे से महाराजाधिराज तक– दिल्ली में अहमद शाह अब्दाली के आक्रमण का काल में रोहिल्ला सरदार नजीब खान ने दिल्ली में बाबर वंशी शाह आलम पर हमला कर उसकी आँखें फोड़ दी और उस पर भयानक अत्याचार किये। मराठा सरदार महाजी सिंधिया ने दिल्ली पर हमला बोल कर नजीब खा को उसके किये की सजा दी। इतिहास गवाह हैं की जिस औरंगजेब ने वीर शिवाजी की वीरता से चिढ़ कर अपमानजनक रूप से उन्हें पहाड़ी चूहा कहा था उसी औरंगजेब के वंशज ने मराठा सरदार को पूना के पेशवा के लिए "वकिले मुतालिक" अर्थात "महाराजाधिराज" से सुशोभित किया। औरंगजेब जिसे आलमगीर भी कहा जाता हैं ने अपनी ही धर्मान्ध नीतियों से अपने जीवन में इतने शत्रु एकत्र कर लिए थे जिसका प्रबंध करने में ही उसकी सारी शक्ति, उसकी आयु ख़त्म हो गई।

पहले पानीपत के मैदान में मराठों को हार का सामना करना पड़ा पर इससे अब्दाली की शक्ति भी क्षीण हो गई और अब्दाली वही से वापिस अपने देश चला गया। कालांतर में मराठों के आपसी टकराव ने मराठा संघ की शक्ति को सीमित कर दिया जिससे उनकी १८१८ में अंग्रेजों से युद्ध में हार हो गई और हिन्दू पद पादशाही का मराठा स्वराज्य का सूर्य सदा सदा के लिए अस्त हो गया।

इतिहास इस बात का भी साक्षी हैं की जब भी किसी जाति पर अत्याचार होते हैं, उनका अन्याय पूर्वक दमन किया जाता हैं तब तब उसी जाति से अनेक शिवाजी, अनेक प्रताप, अनेक गुरु गोबिंद सिंह उठ खड़े होते हैं जो अत्याचारी का समूल नष्ट कर देते हैं।

केवल इस्लामिक आक्रान्ता और मुग़ल शासन से इतिहास की पूर्ति कर देना इतिहास से साथ खिलवाड़ के समान हैं जिसके दुष्परिणाम अत्यंत दूरगामी होंगे।

—डॉ. विवेक आर्य

सर्वजातीय परिणय स्मारिका मंगाएँ

अविवाहित, विधवा/विधुर, तलाकशुदा, प्रौढ़ आदि

कार्यालय– आर्य समाज संचार नगर, इन्दौर

मो. 9977987777, 9977967777

तप, त्याग, विद्या, बल और सहिष्णुता का रुप स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज

स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज लाला नारायणदत्त जी ठेकेदार नई दिल्ली की कोठी में ठहरे थे। वहाँ श्री स्वामी ईशानन्द जी उनकी सेवा में निरन्तर रहे। उस समय स्वामी जी महाराज से प्रार्थना करने पर कुछ घटनाएँ बताए। उनको ईशानन्द जी ने लिख लिया, स्वामी समर्थ नहीं थे श्री स्वामी वेदानन्द गुरुकुल झज्जर उनके पास जाकर घटनाओं को दिखलाए।

श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज तपस्या में महर्षि दयानन्द सरस्वती से द्वितीय स्थान पर आते हैं। उनके जीवन को उन्होंने अपने जीवन उत्थान में प्रमुखता दी थी। जिस प्रकार महर्षि दयानन्द गंगोत्री के उद्‌गम से कोलकाता तक पैदल विचरण किया था एवं भिक्षा से जीवन निर्वाह किया था, उसी प्रकार सात वर्ष तक स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज भी गंगा के तट पर विचरण किया था।

सत्यार्थप्रकाश के 11 जिलों का उल्लेख मिलता है सारे ही स्थान स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज ने देखने की उत्सुकता 11 वर्ष तक भ्रमण किया, इसमें उन्हें जो कठिनाई उठानी पड़ी तथा तपस्या करनी पड़ी वह उनके जीवन में उनकी उत्कर्षता का परिचायक है। ऋषि दयानन्द के समान ही बर्फ में रहे तथा एक लंगोटी में रहे, उनकी शक्ति का परिचय लाहौर में देखने को मिला।

रंगीला रसूल के प्रकाशक श्री राजपाल को जब एक मुसलमान ने छुरा मारा तब वहाँ गली में स्वामी सत्यानन्द जी और स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी दोनों भी उपस्थित थे, किन्तु इस अप्रत्याशित घटना के होने की किसी को भी संभावना न थी।

रक्तरंजित छूरा को लेकर जब वह भाग रहा था तब स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज ही थे जो अपनी वीरता को प्रकट करने हेतु उस घातक पर लपके और कलाई इतने जोर से पकड़ी कि चाकू वहीं उससे छूटकर धरती पर जा गिरा, उन्होंने घातक का हाथ छोड़ा ही नहीं। जहाँ–जहाँ उनको अन्याय को न सहने की ओर इंगित करता है, वहाँ उनकी निडरता का एक ज्वलन्त प्रमाण भी है।

आध्यात्मिक साधना श्री स्वामी जी महाराज की अतुलनीय है। वैराग्य में साधना जोर पकड़ती है, इस साधना से उन्हें आन्तरिक ज्ञान होता था। एक बार स्वामी जी महाराज बीमार हुए। डॉक्टरों ने स्वास्थ्यलाभ की दृष्टि से कश्मीर जाने का परामर्श दिया। स्वामी ईशानन्द जी भी उनके साथ जाने वाले थे, किन्तु स्वामी जी ने वहाँ जाने का विचार छोड़ दिया और अपनी आन्तरिक अभिज्ञान से निर्णय लेकर जीवन की आशा छोड़ दी एवं अपनी दैनन्दिनी में अपने भावी मृत्यु का उल्लेख कर दिया।

श्री महाशय कृष्ण जी उन्हें इस कैंसर से ऋण पाने हेतु जाने का परामर्श दिया। श्री महाराज जी को बचने की बचने की आशा तो न थी किंतु श्री महाशय जी को यह कहकर अपने शिष्टाचार का परिचय दिया कि महाशय जी जब मैंने 1910 से आपकी बात का उल्लंघन नहीं किया तब अब अंतिम काल में आपकी बात का कैसे उल्लंघन करूँ। मुंबई चले गए। सूक्ष्म शरीर स्वामी जी महाराज का अति बलवान था उसी के बल पर अपने क्षेत्र में आगे बढ़ते थे।

प्रेरणादायक संस्मरण

स्वामी दर्शनानन्द जी महाराज का सम्पूर्ण जीवन एक आदर्श सन्यासी के रूप में गुजरा। उनका परमेश्वर में अटूट विश्वास एवं दर्शन शास्त्रों के स्वाध्याय से उन्नत हुई तर्क शक्ति बड़ो बड़ो को उनका प्रशंसक बना लेती थी। संस्मरण उन दिनों का हैं जब स्वामी जी के मस्तिष्क में ज्वालापुर में गुरुकुल खोलने का प्रण हलचल मचा रहा था। एक दिन स्वामी जी हरिद्वार की गंगनहर के किनारे खेत में बैठे हुए गाजर खा रहे थे। किसान अपने खेत से गाजर उखाड़कर, पानी से धोकर बड़े प्रेम से खिला रहा था।

उसी समय एक आदमी वहां पर से घोड़े पर निकला। उसने स्वामी जी को गाजर खाते देखा तो यह अनुमान लगा लिया की यह बाबा भूखा हैं। उसने स्वामी जी से कहा बाबा गाजर खा रहे हो भूखे हो। आओ हमारे यहां आपको भरपेट भोजन मिलेगा।

अब यह गाजर खाना बंद करो। स्वामी जी ने उसकी बातों को ध्यान से सुनकर पहचान कर कहा। तुम ही सीताराम हो, मैंने सब कुछ सुना हुआ हैं। तुम्हारे जैसे पतित आदमी के घर का भोजन खाने से तो जहर खाकर मर जाना भी अच्छा हैं। जाओ मेरे सामने से चले जाओ।

सीताराम दरोगा ने आज तक अपने जीवन में किसी से डांट नहीं सुनी थी। उसने तो अनेकों को दरोगा होने के कारण मारापीटा था। आज उसे मालूम चला की डांट फटकार का क्या असर होता हैं। अपने दर्द को मन में लिए दरोगा घर पहुंचा। धर्मपत्नी ने पूछा की उदास होने का क्या कारण हैं। दरोगा ने सब आपबीती कह सुनाई। पत्नी ने कहा स्वामी वह कोई साधारण सन्यासी नहीं अपितु भगवान हैं। चलो उन्हें अपने घर ले आये। दोनों जंगल में जाकर स्वामी जी से अनुनय–विनय कर उन्हें एक शर्त पर ले आये। स्वामी जी को भोजन कराकर दोनों ने पूछा स्वामी जी अपना आदेश और सेवा बताने की कृपा करे।

सीताराम की कोई संतान न थी और धन सम्पति के भंडार थे। स्वामी जी ने समय देखकर कहा की सन्यासी को भोजन खिलाकर दक्षिणा दी जाती हैं। सीताराम ने कहा स्वामी जी आप जो भी आदेश देंगे हम पूरा करेंगे। स्वामी जी ने कहा धन की तीन ही गति हैं। दान, भोग और नाश। इन तीनों गतियों में सबसे उत्तम दान ही हैं।

मैं निर्धन विद्यार्थियों को भारतीय संस्कृति के संस्कार देकर, सत्य विद्या पढ़ाकर विद्वान बनाना चाहता हूँ। इस पवित्र कार्य के लिए तुम्हारी समस्त भूमि जिसमें यह बंगला बना हुआ हैं। उसको दक्षिणा में लेना चाहता हूँ। इस भूमि पर गुरुकुल स्थापित करके देश, विदेश के छात्रों को पढ़कर इस अविद्या, अन्धकार को मिटाना चाहता हूँ। स्वामी जी का संकल्प सुनकर सीताराम की धर्मपत्नी ने कहा। हे पतिदेव हमारे कोई संतान नहीं हैं और हम इस भूमि का करेंगे क्या।

स्वामी जी को गुरुकुल के लिए भूमि चाहिए उन्हें भूमि दे दीजिये। इससे बढ़िया इस भूमि का उपयोग नहीं हो सकता। सिताराम ने अपनी समस्त भूमि, अपनी सम्पति गुरुकुल को दान दे दी और समस्त जीवन गुरुकुल की सेवा में लगाया। एक जितेन्द्रिय, त्यागी, तपस्वी सन्यासी ने कितनो के जीवन का इस प्रकार उद्धार किया होगा। इसका उत्तर इतिहास के गर्भ में हैं मगर यह प्रेरणादायक संस्मरण चिरकाल तक सत्य का प्रकाश करता रहेगा।

डॉ. विवेक आर्य

ऑन लाईन दिनांक- 07 मई 2020 (गुरुवार) को
आचार्य प्रभामित्र (अंतर्राष्ट्रिय प्रवक्ता) के ब्रह्मत्व में
डॉ. आचार्य भानुप्रताप वेदालंकार एवं
श्रीमती गायत्री सोलंकी की सुपुत्री
कु. अनन्या का अन्नप्राशन संस्कार सम्पन्न हुआ।

RNI Registration No- RNI/MPHIN/2009-28723 JUNE 2020 Postal Registration No.MP/IDC/1533/2017-19

वयं राष्ट्रे जागृयाम:

SUBSCRIBE ON YOUTUBE

वैदिक राष्ट्र Vaidik Rashtra

You Tube Channel

वैदिक राष्ट्र VAIDIK RASHTRA LIKE & SHARE

You Tube Channel

वैदिक पत्र-पत्रिकाओं के लिए
Subscribe on YouTube VAIDIK RASHTRA You Tube Channel

वैदिक सिद्धांतों एवं वैदिक साहित्य के लिए
Like on YouTube VAIDIK RASHTRA You Tube Channel

आर्य जगत् के संपूर्ण समाचार अब एक ही स्थान पर
Share on YouTube VAIDIK RASHTRA You Tube Channel

आर्य जगत् के संस्थाओं, गुरुकुलों, आश्रमों, एवं आर्य समाजों की जानकारी
Bell icon on YouTube VAIDIK RASHTRA You Tube Channel

संन्यासियों, वैदिक-विद्वानों के साक्षात्कार, प्रवचन, लेख, ऑडियों एवं विडियों के लिए
Subscribe on YouTube VAIDIK RASHTRA You Tube Channel

वैदिक विद्वानों, आर्य धर्माचार्यों (पुरोहित) एवं भजनोपदेशक के कार्यक्रमों हेतु
Like on YouTube VAIDIK RASHTRA You Tube Channel

संपूर्ण समाचार, वैदिक लेख, ऑडियों-विडियों, आर्य पत्र-पत्रिकाएँ एवं वैदिक साहित्य के प्रसार-प्रचार के लिए
Share on YouTube VAIDIK RASHTRA You Tube Channel

॥ ओ३म् ॥

9977957777, 9977967777 9977987777, 9202213410

यज्ञो वै विष्णु: यज्ञों वै श्रेष्ठतमं कर्म

- दैनिक यज्ञ: ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ (हवन)
- साप्ताहिक यज्ञ: सत्संग (रविवार)
- वैदिक दिव्य यज्ञ सत्संग (प्रत्येक माह अंतिम रविवार)
- पारिवारिक यज्ञ सत्संग (परिवारों में नि:शुल्क यज्ञ सत्संग)

स्वर्ग कामो यजेत् अयं यज्ञो भुवनस्य नाभि

विशेष अवसरो पर यज्ञ (हवन) करवाएँ

जन्मदिवस, वैवाहिक वर्षगांठ, गृह प्रवेश, गृह शांति, शांति यज्ञ, वास्तु यज्ञ, गायत्री यज्ञ, श्रीयज्ञ, सरस्वती यज्ञ, संजीवन यज्ञ, मेधा यज्ञ, वाणिज्य यज्ञ, महामृत्युंजय यज्ञ, पुण्यतिथि यज्ञ, उठावना (चौथा), चतुर्वेद शतक यज्ञ एवं वेद प्रवचन, गीता-प्रवन, उपनिषद्-कथा आदि सुअवसरों पर आचार्यो को आमंत्रित कर लाभ प्राप्त करें।

16 संस्कारों-यज्ञों को करवाएँ

पुंसवन संस्कार, सीमतोन्नयन संस्कार, जातकर्म संस्कार, नामकरण, निष्क्रमण संस्कार, अन्नप्राशन संस्कार, चूडाकर्म संस्कार (मुण्डन), कर्णवेध संस्कार, उपनयन संस्कार (जनेऊ), समावर्तन संस्कार, विवाह संस्कार एवं अत्येंष्टि आदि सभी 16 संस्कारों हेतु संपर्क करें।

कार्यालय: आर्य समाज मंदिर- 219, संचार नगर, एक्स., कनाड़िया रोड़, इन्दौर-452016,
ई-मेल: aryasamajindore9977957777@gmail.com, www.indorearyasamaj.com, aryasabha.in

नोट- यज्ञ (हवन) से संबंतिधत हवन पात्र, कुण्ड, हवन सामग्री, हवन समिधा (लकड़िया) एवं वैदिक साहित्य भी उपलब्ध है

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक आचार्य भानुप्रताप वेदालंकार द्वारा आर.टेक. ग्राफिक्स 864/9, नेहरु नगर, इन्दौर से मुद्रित एवं 219, संचार नगर एक्सटेंशन, कनाड़िया रोड़, इन्दौर से प्रकाशित। न्याय क्षेत्र इन्दौर रहेगा। संपादक : आचार्य भानुप्रताप वेदालंकार

मुद्रण दिनांक- प्रत्येक माह की 28 तारीख प्रेषण दिनांक- प्रत्येक माह की 30 तारीख प्रेषण कार्यालय- आर.एम.एस. इन्दौर डाकघर - 452001